ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -**शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ ज्ञान कर्म और उपासना १९ ०३ १९७७

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान् और प्रतिभाशाली कहलाया जाता है। उसी की चेतना से यह जगत् चेतनित्त हो रहा है। जितना भी यह जड़-जगत्, उनको जो क्रिया में लाने वाला है अथवा क्रियाशील बना रहा है, वह एक मनोनीत चेतना कहलाई जाती है। उसी की चेतना में वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो क्रियाशील दृष्टिपात आ रहा है।

आज का हमारा वेद का ऋषि हमें यह कह रहा है, हमें यह नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है और यह कह रहा है, हे मानव! तू अपने जीवन की ऊर्ध्व-गति में ले जाने का प्रयास कर। ऊर्ध्व-गति में कौन जाता है? ऊर्ध्व-गति हम किसे कहते हैं? हमारे आचार्यों ने यह माना है कि सर्वत्र इन्द्रियों में उस की प्रतिभा का वर्णन अथवा उसकी महानता निहित रहती है, हमारी प्रत्येक इन्द्रियों में धर्म और मानवता समाहित रहती है।

धर्म और मानवता

हमें विचारना चाहिए कि मानव का धर्म और मानवता दोनों का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्योंकि धर्म उसे कहा जाता है, जिसको मानव अपने में धारण कर लेता है। और धर्म उसे कहते जो मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है। वह धारण नहीं किया जाता, वह स्वतः ही उसमें निहित रहता है। प्रत्येक इन्द्रियाँ धर्म के उस सूत्र में पिरोई हुई रहती हैं, जिस सूत्र को धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जा है।

मानो देखो, वह जो धर्म है, वह, मुनिवरों! देखो, इन्द्रिय प्रहे वृत्तं लोकाः, धर्म रूपी सूत्र मे, बेटा!। यह संसार पिरोया हुआ है, ये नाना लोक-लोकान्तर पिरोएं हुए रहते हैं। परन्तु आज हमें धर्म को जानना है। मैंने धर्म के सम्बन्ध में बहुत-सी विवेचना पुरातन काल में प्रकट करते हुए कहा है कि मानव को वास्तव में धर्म को जानना चाहिए, क्योंकि धर्म एक सूत्र है, जिस सूत्र में, बेटा! प्रत्येक परमाणु पिरोया हुआ है, मुनिवरों! लोक-लोकान्तर पिरोया रहता है और वह ऋत् और सत् में रमण करता हुआ मानव को उज्ज्वलता प्रकट करता रहता है, उज्ज्वलता देता रहता है।

याज्ञवल्क्य-आश्रम मे समिधा-चयन

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आश्रम में विराजमान हो करके वह अपने ब्रह्मचारियों से उच्चारण कर रहे थे, हे ब्रह्मचारियों! आओ, उस धर्म के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करेंगे। मेरे पुत्रो! वह काल जब स्मरण आने लगता है तो हृदय गद्-गद् हो जाता है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के आश्रम में, बेटा! नाना ब्रह्मचारी प्रातःकालीन नाना समिधाओं को ले करके, आचार्यो के चरणों में ओत-प्रोत हो गएं और ऋषि को कहते हैं, महाराज! हम याग करना चाहते है।

समिधा और अग्नि

ब्रह्मचारी जब यह कहते हैं कि हम याग करना चाहते है। तो ऋषि कहते हैं, कि - याग कैसे कर रहे हैं? उन्होंने कहा याग, मैं समिधाओं के द्वारा कर रहा हूँ। समिधा किसे कहते हैं? समिधा उसे कहते हैं, जो अग्नि को चेतन, अग्नि को उद्बुद्ध कर देती है। परन्तु अग्नि कैसे उद्बुद्ध होती हैं? यह समिधाओं के द्वारा होती रहती है। और, समिधा जब अग्नि में विद्यमान, प्रवेश कर जाती है तो अग्नि उद्बुद्ध हो जाती है।

हृदय-अग्नि की समिधा

इसी प्रकार हमारे यहाँ समिधा, जहाँ काष्ठ की समिधा होती है, जहाँ वृक्ष की समिधा होती है वहाँ, मुनिवरों! देखो, मानव के शरीर में जो याग होता है, उसकी समिधा क्या है? ब्रह्मचारियों से याज्ञवल्क्य मुनि महाराज कहते हैं कि - हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारे हृदय में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उसकी समिधा क्या है? उसका वर्चोसि कौन हे? मानो देखो, उसको उद्बुद्ध करने वाला कौन है? तो मेरे पुत्रो! वेद के ऋषि ने जब ऐसा कहा तो ब्रह्मचारी कहते हैं, हे प्रभु! हमारे शरीर की जो अग्नि, उद्बुद्ध होती है, उसकी समिधा ज्ञान है, उसकी समिधा विवेक है। जिसको धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जाता है। और यह संसार उद्बुध्यस्वाग्ने कह करके देखो, अपनी वाणी से आन्तरिक अग्नि को बाह्य जगत में प्रवेश करा देता है। और कहीं-कहीं बाह्य जगत की अग्नि को आन्तरिक जगत् में प्रवेश करा देता है।

तत्त्व-अग्नि

तो परिणाम क्या? यह जो विशाल अग्नि है, इस अग्नि को हम अपने में धारण करना चाहते हैं, जो अग्नि-लोकों में सूर्य को वर्चोसि बना रही है, मानो तेजोमयी बना रही है, वही अग्नि है, जो पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश हो करके, मेरे पुत्रो! वह नाना प्रकार के खाद्य और खनिजों को उद्बुद्ध कर रही है। वही, मुनिवरों! देखो, वही तेजोमयी अग्नि है, जो नाना प्रकार की वनस्पति को ऊँचा बना रही है।

मातृ-गर्भ में अमृताग्नि-उद्बोधन

वही अग्नि है, जो माता के गर्भस्थल में, बेटा! एक बिन्दु प्रवेश करता है, उस एक बिन्दु के प्रवेश करने पर मानो परमाणुओं की विभक्तता होती है। परमाणु विभक्त हो जाते हैं और परमाणु अपने-अपने आंगन में बेटा! गति करना प्रारम्भ करते हैं। और जब माता के गर्भस्थल से परमाणु गति करते हैं, उन्हीं परमाणुओं से, बेटा! देखो, वह धर्मज्ञ प्रह्ले लोकाः। वेद का ऋषि कहता है, वह अपने-अपने धर्म और अपनी-अपनी आभा में, अपने-अपने कारण में प्रत्येक परमाणु लय हो करके, बेटा! हम जैसे प्यारे पुत्रों! का निर्माण, माता के गर्भस्थल में होता है।

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब मेरी प्यारी माता अनुसन्धान करती रही है। मुझे वह काल स्मरण है, जब मेरी प्यारी माता याग करती रही है और जब वह याग करती है, तो बेटा! उसका याग कैसा भव्य है! क्या मानो देखो, उसका कोई वृत्त करने वाला हो, मानो अनुसन्धान करने वाला हो, तो मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मलोक को प्राप्त हो जाती है, मेरी प्यारी माता। हे माँ! तू वास्तव में जीवन की उद्बुद्ध करने वाली है! प्रकाश में ले जाने वाली है! वही अग्नि उद्बुद्ध हो करके अमृत में प्रवेश हो जाती है, अमृत में उसका परिवर्तन हो जाता है।

तो मानो मेरे प्यारे! वह माता का कितना व्यापक विचार है, एक धर्म है! और उस धर्म को जो अपना लेता है, मेरे प्यारे! वह कर्त्तव्यवाद की वेदी पर विद्यमान हो करके, अपनी जीवन की ऊर्ध्वा-गति में ले जाता है, महान् बना लेता है।

आज मैं, मुनिवरों! देखो, विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। आज हम संक्षिप्त परिचय देने आए हैं और वह परिचय क्या है कि इस संसार को वैदिक ऋषियों ने, बेटा! नाना रूपों में इस संसार की कल्पना की है। इस संसार को याज्ञिक पुरूषों ने यज्ञमयी माना है। परन्तु देखो, यज्ञमयी तुम्हें दृष्टिपात! आती रहेगी।

आओ, मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव विज्ञान के युग में प्रवेश करना चाहता है। वैज्ञानिक बनना चाहता है। आज, मेरे प्यारे! महानन्द ही मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा देते रहते हैं, परमाणुवाद की विचारधारा पर ले जाना चाहते हैं। परन्तु आज से पुरातन काल में, हमने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था कि संसार में मानव को अपने

जीवन में शक्ति को उत्पन्न करना है, वह शक्ति जो अव्याहत गति बन करके, ओजस्वी-वर्चोसि बन करके, मेरे प्यारे! मानव जीवन को एक महान बना देती है अथवा पवि. बना देता है। जिस पवित्रता का स्वरूप एक मानवीय जीवन में एक आभा बन करके रहता है अथवा विचित्र बन करके रहता है।

श्वेतकेतु ऋषि का याग

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ। एक समय देखो, श्वेतकेतु ऋषि महाराज थे। श्वेतकेतु ऋषि महाराज, जो दद्दड़ गोत्रीय कहलाते थे। परन्तु देखो, वह उनका जो संस्कार हुआ, मानो देखो, वह शाण्डिल्य गोत्र मे हुआ। उनका संस्कार जब शाण्डिल्य गोत्र में हुआ तो वह, मुनिवरों! देखो, नित्य-प्रति याग करते थे। कैसा याग करते थे? मुनिवरों! नाना साकल्य भयंकर वनों से एकत्रित करते रहते और याग करते रहते थे। वह इस ब्रह्माण्ड को, मानो देखो, इस वायुमण्डल को वह पवित्र बनाते रहते थे। और यह कहा करते थे कि सुगन्धि ही देना हमारा कर्त्तव्य है। तो इसीलिए, मेरे पुत्रों! संसार में प्रत्येक मानव को सुगन्धि को लाना है, वह सुगन्धि यागों के द्वारा आती है, मानो वह विचारों के द्वारा आती है। वह सुगन्धि राष्ट्र के द्वारा भी आती है।

राष्ट्रीय सुगन्धि

जिस राजा के राष्ट्र में मुनिवरों! देखो, सुगन्धि होती रहती है ....। और, सुगन्धि कैसे होती रहती है? मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था कि राजा सुगन्धि की स्थापना करता है, जिस राजा का जीवन सुचरित्र होता है। मानो सुचरित्र जो जीवन होता है, वह पाण्डित्व को ले करके ब्रह्म-ज्ञान को ले करके, बेटा! वह अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाता है।

ब्रह्मज्ञानी राजा जालवी का समिधावाद

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब महाराजा जालवी अपने आसन पर विद्यमान है। परन्तु देखो, ब्राह्मण-समाज यह उच्चारण करता है कि चलो, राजा जालवी के ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करेंगे। तो मुनिवरों! देखो, वह महाराजा जालवी के आश्रम में नाना ब्राह्मण, वेद के जिज्ञासु, मुनिवरों! देखो, वह महर्षि राजा जालवी के द्वार पर पहुँचते हैं। जालवी राजा मानो देखो, मनुवंश में हुआ है, महाराजा मनुवंशलज में हुआ है। महाराजा जालवी के समीप, बेटा! जब नाना ब्राह्मण पहुंचे, तो ब्राह्मणों ने मानो यह विचारा, ऋषियों ने कि हम इसको मन ही मन में प्रणाम कर लेता है। हम हम इसको मन ही मन में प्रणाम कर नमस्कार कर लेते हैं, परन्तु जब तक हमें यह प्रतीत न हो कि यह राजा ब्रह्मज्ञानी है अथवा नहीं है। तो उन ऋषियों में से, मुनिवरों! देखो, ब्राह्मणों में मानो एक ब्राह्मण को चुनौती हुई, ब्राह्मण का निर्वाचन किया और यह कहा कि तुम इस राजा से यह प्रश्न करो और राजा इसका क्या उत्तर देगा। और, इसके मस्तिष्क को दृष्टिपात करो कि यह वास्तव में ब्रह्मवेत्ता है अथवा नहीं।

त्रैतवादी समिधाएं

मुनिवरों! कहा जाता है कि उनमें से महाराजा वरुण ने महर्षि वरुण ने, मानो महर्षि गौतम के पिता ने, मुनिवरों! देखो, महाराजा जालवी मे मस्तिष्क को दृष्टिपात करके यह कहा कि महाराज! तुम जो प्रातःकाल याग करते हो, वह कितनी समिधाओं से करते हो? तो मुनिवरों! उस समय महाराजा जालवी कहते हैं कि जो याग किया आज मैंने प्रातःकाल में, वे तीन प्रकार की समिधा थीं। उन तीन समिधाओं से मैं याग करता हूँ। मानो वे तीन समिधा क्या हैं? महाराजा जालवी कहते हैं, कि - तीन जो समिधा हैं, वे मानो देखो, तीन समिधा, जिससे मैं अग्न्याधान करता हूँ, अग्नि को प्रदीप्त करता हूँ, वे तीन प्रकार की समिधा मेरे यहाँ मानो - ज्ञान, कर्म और उपासना कहलाई जाती हैं।

वाह रे राजन्! म्हाराजा जालवी क्या उत्तर देते हैं ऋषि को कि मैं मानो देखो, अपने हृदय में अग्नियों का उद्बुद्ध कर रहा हूँ और प्रातःकाल में उद्बुद्ध करता हूँ। उन्हीं अग्नियों से मैं याग करता रहता हूँ। उसी बाह्य जगत् मे जब याग करता हूँ, तो तीन समिधाओं से याग करता हूँ। तीन समिधा क्या हैं? ज्ञान, कर्म और उपासना के ऊपर चिन्तन प्रारम्भ रहता है। परन्तु उन्हीं को और बाह्य जगत में ले जाता हूं तो अग्न्याधान करता हूँ। वे काष्ठ की तीन समिधा ले करके जो तीन ही क्यों मानी जाती है, क्योंकि त्रैतवाद को मुझे जागरूक बनाना है। मेरे हृदय में जो तीनो गुण हैं, रजोगुण-तमोगुण-सतोगुण , मानो देखो, ये तीन समिधा ले करके, मैं अग्न्याधान करता हूँ। इसलिए कर रहा हूँ कि बाह्य जगत् में मेरा यह लोक-परलोक मानो देखो, यह त्रिवर्धम् त्रिवृत्तो में, मेरा यह संसार पवित्र बन जाएं। मैं अपने राष्ट्र को तीन विभाग में विभक्त करना चाहता हूँ - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य। मानो देखो, यह वैश्यता में शूद्र को मैं नहीं ले रहा हूँ। मानो देखो, तीनों विभागों में मैं अपने राष्ट्र को, अपनी प्रजा को मानो एक सूत्र में लाना चाहता हूँ।

ज्ञान से उपासना तक

इस प्रकार का विचार, जब, मुनिवरों! देखो, राजा ने, महाराजा जालवी ने दिया तो ब्रह्मवेत्ताओं को, जिज्ञासुओं को यह प्रतीत हो गया कि यह राजा तो ब्रह्मवेत्ता है और ब्राह्मण हैं। मानो देखो, मुनिवरों! वे उसके समीप विद्यमान हो गएं और यह कहा कि - महाराज! हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि यज्ञमान मानो तीन से याग कर रहा है। वह तीन, आप ने प्रथम कैसे कहा था कि ज्ञान-कर्म-उपसना के द्वारा याग कर रहा हूँ? मानो ज्ञान-कर्म-उपसना में क्या-क्या दोनों में अन्तर्द्वन्द्व माना गया है? परन्तु राजा कहते हैं मानो ज्ञान कहते हैं, इस संसार के प्रत्येक पदार्थ का ज्ञान हो जाना। और प्रत्येक पदार्थ को ज्ञान में लाना ही मानो मुझे एक समिधा बनानी है समिधा का अभिप्रायः यह है कि अग्न्याधान हो करके अग्नि में भस्म हो जाती है, यह तो मेरा विचार है, मेरा जो संकीर्णवाद है मानो वह व्यापक बन करके, वह ज्ञान में परिणि हो जाएं, ज्ञान में आभायित हो जाएं।

ज्ञान होगा तो मैं कर्मकाण्ड की पद्धति को जान सकता हूँ। कर्मकाण्ड में मेरी निष्ठा हो जाएं, कर्मकाण्ड में मैं आभा में निहित हो जाऊँ। तो मानो देखो, यह मेरी उज्वल समिधा है, मानो ज्ञान-कर्म-उपासना में। उसके पश्चात् परमात्मा का अपने को समर्पित कर सकता हूँ।

परमात्मा को समर्पित करना बहुत अनिवार्य है। जिस प्रकार, मुनिवरों! देखो, माता अपने बालक को अपने गर्भस्थल में धारण करती हुई मानो अपने को बालक में रत्त कर देती है। इसी प्रकार देखो, मैं अपने को रत्त करना चाहता हूँ। वे तीन समिधा हैं। समिधा का अभिप्रायः यह कि प्रत्येक मानव मेरी अन्तिम जो समिधा है, मेरे शरीर और विचारों की समिधा बन करके वह अग्न्याधान क्या परमात्मा ब्रह्म को प्राप्त होती चली जाएं, ब्रह्म में निष्ठित हो जाऊँ।

राष्ट्रीय उत्थान की तीन समिधाएं

ऐसा विचार वह दे रहा था। परन्तु आगे ब्रह्मणों ने कहा कि प्रभु! वे तीन प्रकार की समिधा कौन-सी हैं, जिनसे यह राष्ट्र ऊँचा बनता है, राष्ट्र को भव्य बनाया जाता है? उस समय राजा ने कहा कि तीन प्रकार की समिधा वे कहलाती हैं, जो राष्ट्र को ऊँचा बनाती हैं, सबसे प्रथम मानो जिसमें चटाचट होती हो, मानो जिसमें शंख-ध्वनि होती हो। उसका अभिप्रायः यह कि मेरे राष्ट में बुद्धिमान विशेष हों और बुद्धिमानों के द्वारा यह राष्ट्र, समाज ऊँचा बनता है। जब बुद्धिमान जिस भी काल में होते हैं, जिस गृह में बुद्धिमान होते हैं, वह गृह पवित्र होता है। जिस राजा के राष्ट्र में बुद्धिमान पुरूष होते हैं, वह राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। परन्तु इसी प्रकार मेरी यह प्रारम्भ की जो समिधा है, मैं उससे ही अपने राष्ट्र में ब्राह्मणों को विशेष बनाता हूँ।

मुनिवरो! देखो, राजा जालवी कहते हैं कि मेरे यहाँ एक समय मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता स्वर्णकेतु ऋषि महाराजा आए और - ने यह कहा कि महाराज! मेरे जो आचार्य हैं, मेरे जो पितर हैं, आचार्य जिनके कुल में मैं अध्ययन कर रहा हूँ, परन्तु उनके कुल में - तो बहुत हैं परन्तु वहाँ देखो, महाराज जालवी कहते हैं ब्रह्मवेत्तओं से, मैंने द्रव्य को प्रदान किया और कहा, जाओ, ब्रह्मचारी ले जाओ क्योंकि विद्यालय पवित्र होने चाहिए। विद्यालय में बुद्धिमत्ता होनी चाहिए। मानो देखो, जिससे मेरा -उन्होंने कहा पवित्र बन जाएं।

महाराज जालवी ने कहा कि - मेरी सबसे प्रथम समिधा ब्राह्मण मेरे राष्ट्र में हों, द्वितीय, जिससे मेरे यहाँ मानो क्षित्रय हों, जिन क्षत्रियों से मेरा राष्ट्र बलिष्ठ होता है, पवित्र बनता है और उनमें धर्म पिरोया हुआ रहता है। इसी प्रकार मानो तृतीय जो समिधा है, वह वैश्य होनी चाहिएं वैश्य अपने द्रव्य को ......, कृषक, उद्यम करने वाला हो, मानो देखो, कृषक को जो द्रव्य आता है, मानो देखो, और भी नाना प्रकार का व्यापार कणाज होता है, जिससे राष्ट्र की आभा बनती है पवित्रतम् बनती है। आज वे मेरे यहाँ ऊँचे होने चाहिए, सुचरित्र होने चाहिए। उनमें किसी प्रकार की हिंसा न हो तो मेरा राष्ट्र पवित्र होगा।

समिधावाद में याग-चयन

परन्तु देखो, उस समय उन्होंने कहा, तो प्रभु! आप याग में जिनसे अग्न्याधान करते हो वे समिधा कौन-सी हैं? उन्होंने कहा, वह समिधा मेरे यहाँ जिस समय प्रातःकालीन याग करता हूँ, मैं और मेरी पत्नी जो याग करते हैं, सबसे प्रथम हम ब्रह्म-चिन्तन करते हैं, ब्रह्म-याग करते हैं और ब्रह्म-याग के पश्चात् हम मानो देखो, उसके पश्चात् देव-पूजा करते हैं और देवपूजा के पश्चात्हम मानो देखो, अतिथि-सेवा करते हैं, ये तीन याग हमारे राष्ट्र में तीन प्रकार की समिधा कहलाती हैं।

ब्रह्म-याग-चिन्तन

सबसे प्रथम, ब्रह्म का चिन्तन होता है। और ब्रह्म के चिन्तन का अभिप्रायः यह कि ब्रह्मा की आभा में रमण करते रहते हैं, यह ब्रह्म क्या है? हमारे यहाँ प्रथम नियम माना है पवित्रवत् मे कि पति-पत्नी अपने-अपने स्थान पर विद्यमान हो करके प्रातःकाल अपने आसन् को त्याग करके ब्रह्म का चिन्तन करते हैं।

हे ब्राह्मणो! मेरे राष्ट्र में कोई ऐसा गृह नहीं है, जिस गृह में ब्रह्म का चिन्तन न होता हो, पति-पत्नी ब्रह्म का चिन्तन न करते हों, एक आसन पर विद्यमान हो करके। ब्रह्म क्या है? ब्रह्म किसे कहते है? मानो देखो, यह ब्रह्म क्या हे, जिस ब्रह्म में यह संसार पिरोया हुआ है? जिस ब्रह्म में जो हम इस मानवीय आभा को पिरोने वाले हैं? तो मानो, बेटा! वह ब्रह्म का चिन्तन, प्रत्येक राजा के प्रत्येक समाज में, गृह में होता रहता है जिससे गृह में सात्विकता आ जाएं, मानवता आ जाएं, और मानवता आ करके शिष्टाचार आ जाएं, सदाचार आ जाएं। क्योंकि ब्रह्म के चिन्तन से मानो नाना लाभ होते हैं। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति-पत्नियों के गृह में सन्तान मानो देखो, बुद्धिमान होती है।

पति-पत्नियों की जीवनचर्या

राजा जालवी ने बहुत पुरातन काल में कहा था, मेरे यहाँ, मेरे राष्ट्र में भोगवाद नहीं है मेरे राष्ट्र में तो केवल शिष्टाचार है। मेरे राष्ट्र में याग होते हैं और याग भी भिन्न-भिन्न प्रकार के। माता-पिता चाहते हैं कि हमें सन्तान को जन्म देना है, हमें सन्तान को उत्पन्न करना है, तो माता-पिता चिन्तन करते हैं और चिन्तन करने के पश्चात् वह अपनी-अपनी हवि को अपने-अपने आसनों पर परिणत कर देते हैं जिससे की सन्तान का जन्म होता है। और वह जो सुसन्तान है, वही मानो देखो, गृह को ऊँचा बनाती है। और जो माता-पिता मानो अपने बाल्य को

ऊँचा नहीं बना सकते, महान नहीं बना सकते, ब्रह्मचरिष्यामि नहीं बना सकते, उन माताओं का मानो देखो, जीवन न होने के तुल्य कहलाता है। मेरे प्यारे! वह माता सौभाग्यशालिनी होती है, जो माता अपने गर्भस्थल में माता मल्दालसा की भांति अपने प्यारे पुत्र को गर्भाशय में ब्रह्म का उपदेश देने वाली हे।

देव-पूजा

मेरे प्यारे! देखो, वे गृह धन्य होते है वह राष्ट्र धन्य होता है, जिस राजा के राष्ट्र में ब्रह्म का चिन्तन होता हो। प्रत्येक गृह अपने आश्रम में ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हों और उसके पश्चात् वे देव-पूजा करने वाले हों। देव-पूजा कौन करता है? बेटा! देव-पूजा वे माता-पिता करते हैं जिनके गृह में सुगन्धि होती है, मानो देखो, बाल्य ऊँचे बनते है। मुनिवरों! देखो, माता-पिता प्रातःकालीन मानो देव-पूजा करते हैं। देव-पूजा किसे कहते हैं? कि समिधा ली, अग्न्याधान किया, अग्नि प्रदीप्त हो गई है और उसमें मानो देखो, स्वाहा कहते हैं। अपनी वाणी को अग्नि की तरंगों पर विश्राम करा करके मानो देखो, बेटा! वे द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाते हैं। वह द्यौ-लोक में प्रवेश कर जाती है। मानो बेटा! वह देव-पूजा है। कैसा स्वच्छ हृदय है!

परमात्मा की अग्नि से कहता है आचार्य, उद्बुध्यस्वाग्ने मानो उद्बुद्ध कहता है और स्वाहा अग्ने कह रहा है। हे उद्बुद्ध होने वाली अग्नि! तू मानो देखो, अन्तरिक्ष में रमण करने वाली है। तू द्यौ-लोक को प्राप्त होने वाली है। मेरे प्यारे! देखो, वे माता-पिता धन्य हैं, जो अपनी वाणी को द्यौ-लोक में पहुंचा देते हैं, अन्तरिक्ष में पहुंचा देते हैं। मेरे प्यारे! अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, यह वाणी अपने स्वरूप को ले करके, बेटा! द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाती है। परिणाम क्या? देवताओं का दूत कौन है? वह देवताओं का दूत ही तो अग्नि कहलाती है। अग्नि महान् है।

अतिथि-सेवा

मेरे प्यारे! देखो, तृतीय जो समिधा है, जो जीवन में प्रदीप्त होती है, वह अतिथि-सेवा है। अतिथि-सेवा किसे कहते हैं? बुद्धिमान गृह में आता है और बुद्धिमान का स्वागत करते हैं। मानो देखो, बुद्धिमान का जब स्वागत होता है, तो बुद्धिमान प्रसन्न होता है, योगेश्वर प्रसन्न होता है। और जब वह प्रसन्न होता है, तो मुनिवरों! देखो, अपने पुण्य को दे करके वहाँ से प्रस्थान करता है। जो उसने अध्ययन किया है, शिक्षाओं का वृत्त किया है, मानो वह शिक्षा को गृह को दे करके, वह अपने आश्रम को प्रस्थान करता है।

आत्मवेत्ता की समिधा

तो मुनिवरों! उस समय महाराजा जालवी ने जब यह ब्रह्मवेत्ताओं को कहा तो उन्होंने कहा, प्रभु! मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, हम तो आत्मा की समिधा को जानना चाहते हैं। प्रभु! जिससे आत्मवेत्ता बनता हैं, पुरूष। मानो यह तो साधारण उपदेश हमने आपसे पाया है। परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि, आत्मा का उत्थान कौन-सी अग्नि से, कौन-सी समिधा से होता है, जिससे हम आत्मवेत्ता बनें और आत्मा में प्रवेश करते हुए आत्मवत् को प्राप्त होते रहें?

आत्मा का उत्थान

मेरे प्यारे! महाराजा जालवी ने कहा, राजा जालवी कहता है कि आत्मा का उत्थान करना है? हे ब्रह्मजिज्ञासुओं! हे आत्मा! के जिज्ञासुओ! आज यदि तुम यह चाहते हो कि हम आत्मा का कल्याण चाहते हैं, आत्मा को ऊर्ध्व-गति में ले जाना चाहते हैं तो ब्रह्मचरिष्यामि देवत्वं ब्रह्मलोकाः। आज मैं तुम्हें एक ही वाक्य प्रकट करा देता हूँ कि यह जो ब्रह्म की चाह है, ब्रह्मचर्य हमारे शरीर में प्रवाह से गति कर रहा है, इसको प्राण के द्वारा प्राण रूपी तरकश पर मानो देखो, इसको तीर की भांति मानो इसको अभ्यस्त करा दो और उस पर आत्मा मनश्च

प्रह्वे लोकाः एक ही लक्ष्य रहता है कि आत्मा को जानना है।

आत्मा की पितर-पिपासा

मानो देखो, जब वह उस पर तरकश, जब तीर पर अभ्यस्त हो जाता हैं, तो मानो उसका एक ही लक्ष्य रह जाता है, एक ब्रह्म को प्राप्त करना। वह ब्रह्म का मानो दखो यह प्राण है, प्राणायाम करना और प्राण के द्वारा इस आत्मा को जानना क्योंकि मन को आत्मा के प्राण रूपी तरकश के ऊपर मानों तीर की आभा में अभ्यस्त कर देना चाहिए, जिससे यह आत्मा में प्रवेश कर जाएं। आत्मवत् जी है, यह आत्मा का ज्ञान ही संसार में एक मानवता को प्रवेश करा देता है। आत्म-ज्ञान है जो राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, - है जो मोक्ष को ले जाता है। आत्मा का जो बलिष्ठ प्राणी होता है, वह सन्तान से विहिन नहीं हो सकता। वह अपने में ऊँचे कर्मों से हीनता को प्राप्त नहीं होता।

आत्मा की पितर-पिपासा

इसीलिए मैंने बहुत पुरातन काल में अपने प्यारे महानन्द जी के उपदेश ...., परन्तु इनके वाक्य, इनके प्रश्नों का उत्तर देते हुए मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था कि मानव को अपनी आत्मा को ऊर्ध्वा में बनाना चाहिए। आत्मवत जो पुरूष होता है उसके शरीर में वीर्यत्व होता है और जो वीर्यत्व होता है, वह देखो, जहाँ देवयाग करता है, वहाँ, पितर-याग में सफलता को प्राप्त होता है। आज मैंने बहुत पुरातन काल में अपने वाक्यों को प्रकट करते हुए कहा था जो कि संसार में मानो देखो, मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है। अपने जीवन को आत्म-तत्वों को प्राप्त करना है। आत्म और ब्रह्मलोकों को प्राप्त करना है।

आज का हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? आज मैं यह महाराजा जालवी के वाक्यों को प्रकट कर रहा हूँ। महाराजा जालवी जहाँ राष्ट्र में कुशल थे, वहाँ आत्मवत् को जानते थे, वहाँ ब्रह्मवेत्ता भी कहलाए जाते थे। ब्रह्मजिज्ञासुओं ने जब यह वाक्य प्रकट किया जो उस समय उन्होंने कहा कि - महाराज! आत्मा का और सन्तान का क्या सम्बन्ध है, आज जो आपने सन्तान को कहा है, अथवा पुत्र को कहा है? उस समय महाराजा जालवी कहता है कि यह मानव के जीवन में स्वाभाविक परिणाम की इच्छा होती है। एक मानव, माता-पिता जो अपने गृह में कर्म करते हैं तो कर्म करने के पश्चात् मानव को परिणाम की इच्छा होती है। उस परिणाम में मानव का यह स्वभाव बन जाता है कि वह एक पितर-याग करता है और पितर बनने की प्रायः मानो देखो, वह स्वतः एक आत्मा की पिपासा जागरूक होती है। इसीलिए मैंने पुत्र की आभा उच्चारण की है।

मोक्ष, आत्मा और पुत्र-सम्बन्ध

महाराजा जालवी के इन वाक्यों को पान करने वाले ऋषियों ने कहा कि प्रभु! हम यह जान सकते हैं कि आत्मा का मोक्ष का और पुत्र का क्या सम्बन्ध है? उन्होंने कहा कि मोक्ष का और पुत्र का विशेष कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु जो मानव त्यागपूर्वक रहता है। इस संसार में त्याग से रहता है, क्योंकि पितर जो होता है। और पुत्र जो होता है, वह माँ का और पिता का हृदय होता है। परन्तु वह जो वह जो हृदय है, वही तो हृदय की वर्चोसि बना देता है और वह जो हृदय है, एक हृदय को त्याग करके एक हृदय को देव गति को प्राप्त कराता हुआ, वह मोक्ष की पगडंडी को प्राप्त कर लेता है। परन्तु देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में अपने वाक्यों को निर्णय देते हुए कहा था। महाराजा जालवी ने जब यह वाक्य कहा तो ऋषिवर मानो उनके वाक्यों से सन्तुष्ञ्र होने लगे।

मुमुक्षु की पुत्रत्व-पिपासा

उन्होंने कहा कि महारज। मोक्ष में क्या होता है? पुत्र की आभा तो समाप्त हो जाती है। उन्होंने कहा जैसे मानव, यह आत्मा, परमात्मा का पुत्र है और मोक्ष में जाने के पश्चात् वह मानो देखो, परमात्मा को प्राप्त हो जाता

है, परमात्मा में आभायित आनन्द को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार मानो देखा पुत्र बनने में ही मानव अपने ब्रह्मवे ब्रह्म-ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। जैसे आचार्य कुल में प्रवेश हो करके शिष्य जब ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करने के लिए उसकी उत्कृष्ट इच्छा होती है, मुनिवरों! देखो, वह पुत्र बन करके, शिष्य बन करके उनके चरणों का छू करके वह ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त करता है, क्योंकि देखो, वह उसका पुत्र है, क्योंकि पुत्र ही पिता के आंगन को प्राप्त हो जाता है। पिता के महान् आनन्द में प्रवेश करके मानो देखो, जैसे मोक्ष में जाने वाला आत्मा प्रकृति की तरंगों को त्याग करके वह मानो देखो, परमात्मा-ब्रह्म रूपी मानो देखो, पितर के द्वार पर प्रवेश कर जाता है। इसी प्रकार शिष्य अपने गुरु के द्वार पर प्रवेश कर जाता है, वह ब्रह्मज्ञानी बनता है। ब्रह्मज्ञानी बन करके उसको क्रिया में लाता है। क्रिया मे ला करके वह मानो देखो, रजोगुण-तमोगुण को समाप्त करता है। वह उनमें प्रवेश करके मानो देखो, ब्रह्म में प्रवेश हो जाता है।

ब्रह्मवेत्ता राजा

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ, आज मैं तुम्हें यह वाक्य प्रकट करने के लिए आया हूँ कि राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। जब राजा के राष्ट्र में राजा ब्रह्मवेत्ता होता है, तो राजा के उस समाज के, उस प्रजा के वैभव को कोई भी मानव नष्ट नहीं कर सकता। क्योंकि उसका वह राजा ब्रह्मवेत्ता है। वह ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म में लीन रहता है। ब्रह्म में समाधिस्थ रहता है। अपने वैभव की मानो उसे चिन्ता नहीं होती। वह अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहा है। प्रातःकाल याग कर रहा है। मानो समय पर अपने अन्न का शोधन कर रहा है। तो वह जो राजा है, वह ऊँचा है, तो इसीलिए वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए।

ब्रह्मवेत्ता

ब्रह्मवेत्ता वह होता है, जो ब्रह्मचरिष्यामि है। जो ब्रह्म को जान लेता है, ब्रह्म के परमाणुओं को जान लेता है, वह देवता बन जाता है। वह प्रत्येक परमाणु पर अपना अनुशासन कर लेता है और जो अनुशासन नहीं कर सकता वह प्राणी नहीं कहलाता। संसार में वह पामर कहलाया जाता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को, प्रत्येक मेरी पुत्री को, प्रत्येक माता को, प्रत्येक ऋषि-मुनि को अपने जीवन में अनुसन्धान की आवश्यकता है और प्रतिभा को प्राप्त करने की आवश्यकता है। जिससे यह संसार ऊँचा बनता है, महान बनता है, पवित्र बनता है। और, पवित्रता को लाने के लिए मानव को तप की आवश्यकता होती है।

विवेकी-जिज्ञासु का धर्म

यह है, बेटा! आज का हमारा वाक्य। आज का वेद का ऋषि यह क्या कह रहा है? आज के ऋषि की वार्त्ता श्रवण करके, बेटा! हमारा अन्तरात्मा गद्-गद् हो गया। आज यह कहा है कि हम प्रत्येक रूप में, बेटा! याग करते हैं और यही हमारा धर्म है। और धर्म और मानवता का, मानो दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। और, मानवता और धर्म से ही यह संसार ऊँचा बनता है। धर्म में पिरोया हुआ यह संसार है, क्योंकि वाणी से लेकर मानव की प्रत्येक इन्द्रियाँ धर्म में पिरोई हुई हैं। एक सूत्र में पिरोई हुई हैं। उनको कौन धारण करता है? बेटा! जो जिज्ञासु होता है। जो विवेकी होता है, वही इनको अपने में धारण करता है। अन्यथा इनको धारण नहीं किया जाता।

आओ, मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नही आया हूँ। आज मैं तुम्हें यह वाक्य प्रकट करने के लिए आया था कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव-कन्या को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है और मानवीयता को महानता के मार्ग

पर ले जाना है, परमात्मा को प्राप्त होना है, दर्शन को पाना है। हे मानव! मानव का दर्शन क्या है? मानव को स्वतः अन्तरात्मा में प्रवेश हो करके जानना चाहिए कि स्वतः मानवीय दर्शन क्या है? स्वतः अपने को जानना ही एक मानवता है।

बेटा! जो याग हो रहा है, वह यागां ब्रह्मे समिधा स्वाहा , मेरे प्यारे! कह करके याग कर रहा है। स्वाहा का अभिप्रायः क्या? मानो जिससे अग्नि उद्बुद्ध होगी। स्वाहा से अग्नि उद्बुद्ध होती है। हमारे आचार्य क्या, इस वाक्य को हमने मेरे प्यारे! आचार्य ऋषि-मुनियों ने वेद से जाना। तो ऐसा कहा है कि जो मानव अग्नि के समीप विद्यमान हो करके स्वाहा कहता है, वह उसकी वाणी का परमाणुवाद, जितने आकार का वह मानव-शरीर बना हुआ है, उतने आकार का परमाणुवाद, मुनिवरों! देखो, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा नहीं परन्तु स्वाहा स्वच्छ होना चाहिए। स्वाहा हृदय से स्वच्छ होना चाहिए जिससे कि यह वायुमण्डल पवित्र बन जाएं, गृह पवित्र बन जाएं।

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, वह अध्ययन किया हुआ, वह अध्ययन, मेरे प्यारे! देखो, किसी काल मे ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने एक याग किया था। अपने गृह में एक याग किया था। मानो वह याग करने के पश्चात्, मुनिवरों! देखो, उसके पश्चात अपनी पत्नी से कहते हैं कि हे देवी! एक सन्तान को जन्म देना है, जन्म देने से पूर्व एक याग करना है। उन्होंने मुनिवरों! देखो, छह माह तक ब्रह्मचर्य को धारण करके उन पति-पत्नी ने, मुनिवरों! देखो, भयंकर वनों से साकल्य एकत्रित किया, औषधियां एकत्रित करने के पश्चात उन्होंने याग किया और वह स्वाहा उच्चारण किया स्वच्छ हृदय से। स्वच्छ मन्त्र हैं, कहाँ व्यंजन आना चाहिए, कहाँ स्वर होना चाहिए, मानो कहाँ ....। (शेष प्रवचांश अभिलब्ध नहीं हो सका) बृजेश कुमार त्यागी, ईकड़ी, १९-०३-७७

२ संसार-वरण १३ ०३ १९८८

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की, महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा है अथवा उसके गुणों का वर्णन कर रहा है। क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह हमारा देव दृष्टिपात आ रहा है।

अनुसन्धान

जब भी मानव अपने में अनुसन्धान करना प्रारम्भ करता है, मानो अनुसन्धान करता हुआ, बहुत दूरी चला जाता है, तो जब वह अपनी आभा में रत्त होने लगता है, अथवा मौन हो जाता है, तो उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसकी अनन्तमयी, महिमा मे वह मग्न हो जाता है, और उसको अपने में दृष्टिपात करता हुआ, उस परमपिता परमात्मा के सर्वज्ञ और विराटमयी स्वरूप का वर्णन करने लगता है और बाह्य जगत और आन्तरिक जगत्, दोनों में उसका प्रायः वह अपने में अनुभव करता रहता है। क्योंकि बाह्य जगत में जब प्रवेश करता है, तो वहाँ यह जो संसार, जो अनन्तमयी दृष्टिपात आता है, एक-एक परमाणु में जगत् और जगत् में यह परमाणु दृष्टिपात आने लगता है। तो मानो उसकी महती और अनन्तता, मेरे प्यारे! उसमें मानवीयतव में निहित दृष्टिपात होने लगती है।

आज का, बेटा! हमारा वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है, क्योंकि संसार में यह जो मानव है, ये प्रेरणा का स्रोत है और प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ, अपने में प्रेरित हो करके मानो इस ब्रह्माण्ड को अपने में मापना प्रारम्भ कर देता है और ब्रह्माण्ड को अपने में प्रायः वह दृष्टिपात करता रहता है। आओ, मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि संसार में जितना भी यह मानवीयवाद है, अथवा यह ब्रह्माण्ड जो हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को मापने लगता है और मापता-मापता बहुत दूरी चला जाता है। ऐसा मानव अपने में क्यों कर रहा है? एक प्रश्न यह आता है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा लगी रहती है कि इस प्रकार यह मानव क्यों इस प्रकार का चिन्तन कर रहा है?

संसार के नाना रूप

मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! ऋषि-मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, अपने को गम्भीर मुद्रा में मुद्रित करते रहे हैं और विचारते रहे हैं कि यह संसार, यह क्या है? क्योंकि संसार के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार की टिप्पणियाँ होती रहती हैं। हमारे यहाँ, जिस भी काल में दार्शनिक अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हुए हैं, उसी काल में इस संसार के ऊपर विचार-विनिमय प्रारम्भ उन्होंने किया है। मेरे प्यारे! यह संसार जो नाना प्रकार के मानो देखो, अपवाद वाला है, नाना राष्ट्र वाला है और अपने में देखो, यह ज्ञानमयी और विज्ञानमयी उड़ाने उड़ता रहता है, आध्यात्मिक विज्ञान और आध्यात्मिक विवेचना में भी, बेटा! यह लगा रहता है। तो विचारा जाता है, प्रत्येक मानव यह विचारता रहता है, और दार्शनिकों के मन में एक पिपासा जागरूक हो जाती है कि यह संसार क्या है?

संसार रूपी व्यापार-शाला

मेरे प्यारे! इस संसार के सम्बन्ध में ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ने वाले ब्रह्मवेत्ताओं ने मानो देखो, ब्रह्म-समाधिष्ट हो

करके इस ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात किया। और, मुनिवरों! देखो, एकान्त स्थलियों में विद्यमान हो करके, न्यौदा में मन्त्रों को ले करके ही अपने में अनुसन्धान करने लगा और विचारने लगा, यह संसार प्रायः है क्या? किसी ने कहा कि यह संसार मानो देखो, एक संशय से युक्त रहता है। प्रत्येक मानव को आशंका बनी रहती है, प्रत्येक मानव आशंका का एक स्रोत बना रहता है और विचारता रहता है कि यह संसार तो देने-लेने की एक व्यापारशाला है। तो मुनिवरों! देखो, प्रथम दार्शनिक कहता है कि यह संसार तो देने-लेने की एक व्यापारशाला है, यहाँ प्रत्येक मानव देखो, व्यापार करने के लिए आया है और यह देने-लेने की एक व्यापारशाला है। किसी का यहाँ, ऋणी बनकर के हम आए हैं, वह देने के लिए आए हैं। और किसी का है तो उसे हम लेने के लिए, ऐसा, बेटा! मानो देखो, अपने में विचार-विनिमय करता रहता है। दार्शनिक कहता है कि यह मानो देखो, नाना जो जगत् प्रायः हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह देने-लेने की व्यापारशाला है, यहाँ व्यापार करने के लिए क्या? हम यहाँ नाना प्रकार के देने-लेने की व्यापारशाला में लगे हुए हैं।

संसार एक कल्प-वृक्ष

तो मुनिवरों! देखो, इससे मानव को शान्ति नहीं हो जाती। मानो अपने में एक और विचार-विनिमय प्रारम्भ करने लगा कि - यह संसार तो एक प्रकार का कल्प-वृक्ष है। यहाँ प्रत्येक मानव जो भी कल्पना करता है, वह उसकी पूर्ण-रूपेण हो जाती है। एक मानव, बेटा! देखो, संसार में आया है, वह भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पना करता है, सहयोगी बनता है, क्योंकि दो प्रकार का ज्ञान प्रायः प्राणी में हमें दृष्टिपात होता है।

दो प्रकार का ज्ञान

एक बेटा! नैमित्तिक ज्ञान कहलाता है और एक मानो देखा हमारे यहाँ नैमित्त प्रभा एक स्वाभाविक माना गया है। एक मानो वह है जो सम्पर्क से प्राणी मात्र को ज्ञान हो रहा है, एक मानो वह है, जिससे वह स्वाभाविक बना हुआ है। मेरे प्यारे! देखो, स्वाभाविक जो ज्ञान है, जितने भी प्राणी मानो मात्र हैं मानव को त्याग करके जितने भी प्राणी मात्र हैं मानो सबको एक मानव ब्रह्मे वाच प्रमाणं ब्रह्मि वृत्तम, उन्हे मानो स्वाभाविक ज्ञान होता है। और, यह तो मनुष्यत्व है इस मनुष्यत्व को मानो देखो, एक सम्पर्क और नैमिकता ज्ञान कहलाता है। सम्पर्क वह कहते हैं - सम्पर्क से हमें ज्ञान होता है। एक माता का पुत्र है, परन्तु माता से उसका विच्छेद हो जाता है और विच्छेद हो करके वह सिंहराजों में मानो अपने जीवन को व्यतीत करता है तो उसी के प्रसंग में उसी की प्रतिभा मानो देखो, उसी के संग रहने से, उसी की कृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। उसी प्रकार का आहार-व्यवहार और विचित्रता में परिणत हो जाता है। परन्तु देखो, जब इसके ऊपर गम्भीर मनन और चिन्तन किया जाता है। तो यह जो मानव जब वैज्ञानिकों के सम्पर्क में जाता है तो विज्ञानवेत्ता बन जाता है। तो बहुत से प्राणी इस प्रकार के हैं। मानो यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। जैसा भी मानव अपने में कल्पना करता है, वैसा ही बनता रहता है।

जीवन और मृत्यु में सम्पर्क-संकल्प

एक मानव इस संसार में दार्शनिक बनना चाहता है। वह दर्शनों में जाने के पश्चात् यह विचारता रहता है कि मैं दार्शनिकं ब्रह्मे वर्णस्सुताः मानो देखो, माता के सम्पर्क में एक दार्शनिक बनता है। माता व्याकुल हो रही है और वह कहती है कि "इस संसार में मेरी मृत्यु हो जाती है। मेरा यह संसार मृत्यु को प्राप्त हो गया, पुत्र चला गया, पति चला गया। मानो देखो, वह मृत्युंजय बन गया है।" तो मुनिवरों! देखो, एक दार्शनिक कहता है, माता के समीप, हे माता! तू इतनी व्याकुल क्यों हो रही है? वह कहती हे कि - मेरा संसार समाप्त हो गया! मानो देखो, मेरा पति नहीं रहा है, पुत्र नहीं रहा है। तो मुनिवरों! देखो, वह दार्शनिक कहता है, हे माता! मैं जानना चाहता हूँ

कि यह जो आत्मा है यह तेरा पुत्र है? या शरीर तेरा पुत्र है? तो मुनिवरो। देखो, वह माता मौन हो जाती है। क्योंकि माता जानती है, यदि तू शरीर को अपना पुत्र कहती है तो शव ज्यों का त्यों निहित है। परन्तु यदि वह कहती हे कि आत्मा मेरा पुत्र है। तो आत्मा मानो किसी का पुत्र-पुत्री नहीं हुआ करता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, माता उस समय मौन हो जाती है और मौन हो करके यह कहती है, ममं ब्रह्मः वृर्णो हे वाचप्रह्वा! हे मानव! हे दार्शनिक! हे ऋषिवर! मानो देखो, इसमें से मेरा कोई भी सम्पर्क नहीं है न तो शरीर से न आत्मा से, शरीर तो शव है, और यह आत्मा मानो चेतना है और चेतना में ही वृत्त बनी रहती है। मानो देखो, रहा यह कि कर्त्ता सम्भवा देखो, यह जो मेरा संकल्प था, उसका विच्छेद हो गया।

मेरे प्यारे! देखो, माता-पिता ने संकल्प किया था किसी काल में, और वह संकल्प यह किया था कि हम पुत्र-यागी बनेंगें मानो देखो, पुत्र यागी बनने वाला ही संकल्प का विच्छेद हो गया। तो परिणाम यह हुआ कि मृत्युंजयं ब्रह्म मृत्यु अपने में कोई मृत्यु न रही। शरीराम् ब्रह्मे वह एक कृत बन गया है।

मृत्युंजयी संकल्पना

तो विचारा गया, मुनिवरों! यह जो संसार है, यह कल्प-वृक्ष है। यहाँ कल्पना की जाती है कि हम ऋषि बनना चाहते हैं, हम मृत्यु को विजय करना चाहते हैं। प्रत्येक मानव के हृदय में यह विचार-विनिमय होता रहता है कि मैं मृत्युंजयी बन जाऊँ, मेरी मृत्यु न आ जाएं। तो मुनिवरों! देखो, यह कल्पना करता रहता है, विचारता रहता है, इस कल्प-वृक्ष के नीचे विराजमान हो करके। यह जो संसार है, एक प्रकार का कल्प-वृक्ष है। बेटा! एक मानव ने यह कल्पना की है कि मैं वेद के मर्म को जानने वाला बनूंगा, वेदां ब्रह्मणां प्रकाशां बृहि वृत्तं देवाः, मैं वेद के मर्म को जान करके वेद के प्रकाश में रहना चाहता हूँ। तो मुनिवरों! देखो, वह एक संकल्प करता है। वह कल्प-वृक्ष के नीचे विद्यमान हो करके कल्पना कर रहा है। तो बेटा! देखो, वह वैसा ही बन जाता है। वह वेद के मर्म को जान लेता है।

मधु-विद्या

उसके पश्चात् और ऊर्ध्वा में वह उड़ाने उड़ता है। मानो देखो, वह अपने मे संकल्प करता है कि मैं इस प्रभु से अपना मिलन करूंगा। प्रभु से जो मेरा विच्छेद हो गया हैं, उससे मेरा मिलन हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, मिलन के लिए, नाना प्रकार की मधु-विद्या में प्रवेश हो जाता है। जैसा, बेटा! देखो, याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी का, दोनों का संवाद आता है। मैत्रेयी ने यही कहा था याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से कि हे प्रभु! मेरा क्या बनेगा? तो उस समय याज्ञवल्क्य ने मधु-विद्या का पठन-पाठन कराया। उन्होंने कहा- हे दिव्यासे! यह जो संसार है, यह संसार तो मानो जैसा भी तुम विचारने लगोगे, वैसे ही बन जाओगे। क्योंकि मानव जो भी क्रियाकलाप कर रहा है, वह मानव पुत्र की कल्पना कर रहा है तो वह अपने लिए कर रहा है, संसार में वित्त की कामना कर रहा है, वह अपने लिए कर रहा है। मानो देखो, अपने में ऊर्ध्वा बनना चाहता है, तो इसी प्रकार यह जो संसार है, यह एक प्रकार का अपने लिए ही एक कल्प-वृक्ष कहलाता है। हम कल्पवृक्ष के नीचे, बेटा! विद्यमान हैं।

महर्षि नारद की कल्प-वृक्ष-गाथा

आओ, बेटा! आज मैं तुम्हें, एक मानो देखा, एक गाथा तुम्हें प्रकट कराने चला हूँ। ऐसी गाथा मैंने पूर्व काल में भी मानो प्रायः ये गाथाएं प्रकट की हैं। आज मैं तुम्हें एक लोलोक्ति प्रकट करना चाहता हूँ। बेटा! एक समय मानो देखो, देवर्षि नारद मुनि ने यह संकल्प किया कि मैं इस संसार में भ्रमण करना चाहता हूँ। यह संसार मानो मेरा मृत एक गृह कहलाता है। मैं इस संसार में भ्रमण करूं। तो बेटा! देखो, जब वह भ्रमण करने के लिए

संसार में गमन करने लगे। तो मानो एक मानव बड़ा दुःखित था और वह मानो एक समय प्रातःकालीन बड़ा दुःखित हो रहा और यह प्रभु से प्रार्थना कर रहा है, हे प्रभु! तू मुझे यहाँ से ले चल। मैं इस संसार में रहना नहीं चाहता, मैं इसमें गमन करना नही चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे! वह क्यों दुःखित था? वह मानव मानो देखो, दुःखित इसलिए था क्योंकि उसकी पत्नी उसे नित्यप्रति दण्डित करती रहती थी। एक समय प्रातःकालीन उस दिवस उसे क्योंकि दण्डित किया और वह मानव बड़ा दुःखित हो रहा था, पत्नी के दण्ड से, तो बेटा! देखो, जब दुःखित हो रहा था, देवर्षि नारद मुनि आ गये। नारद मुनि ने कहा, अरे, मानव! तुम बड़े दु खित हो रहे हो? उन्होंने कहा, हे प्रभु! मैं दुःखित हूँ, मेरी पत्नी मुझे नित्यप्रति दण्डित करती है। उन्होंने कहा, चलो मैं तुम्हें स्वर्ग ले चलूं। वह मानव बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा चलिए, भगवन्!। मैं स्वर्ग में जाने के लिए तत्पर हूँ।

तो मेरे प्यारे! देखो, देवर्षि नारद और उस मानव ने गमन किया उन्होंने, भ्रमण करते हुए, बेटा! देखो, वह विष्णु वर्णनं ब्रह्म वह स्वर्ग के द्वार पर पहुँचे, और स्वर्ग के द्वार पर देवर्षि नारद मुनि बोले, अरे, मानव! देखो, यह कल्प-वृक्ष है, तुम इस कल्प-वृक्ष के नीचे विद्यमान हो जाओ और मैं भगवान् विष्णु से आज्ञा ले आऊँ, तुम स्वर्ग में जाने योग्य हो अथवा नहीं। तो मुनिवरों! देखो, वह मानव बोले बहुत प्रियतम! देवर्षि नारद मुनि तो स्वर्ग में जा पहुँचे और वह मानव जो कल्प-वृक्ष के नीचे विद्यमान था।

संकल्प-विकल्प

उस मानव ने मानो मन्द-सुगन्ध जो वायु चल रही थी, उसमें बड़े प्रभावित हुए और वह प्रभावित हो करके, बोले, अरे यहाँ तो देखो, एक आसन होना चाहिए था। तो मानो वह तो कल्पवृक्ष था, यहाँ कल्पना की, तो बेटा! एक आसन लग गया। उस आसन पर वह विद्यमान हो गये। मानो जब वह विश्रामं ब्रह्मे, तो विचारने लगे, जब मन्द-सुगन्ध वायु ने उसे अति प्रभावित किया, अरे, यहाँ तो विश्राम करने वाला आसन भी होना चाहिए था। बेटा! देखो, विश्राम करने वाला आसन भी लग गया। उस आसन पर वह विद्यमान हो करके वह विश्राम करने लगे। जब मन्द-सुगन्ध वायु ने उसे अति प्रभावित किया तो उस मनुष्य ने कल्पना की, अरे, यहॉ तो देखो, तेरी सेवा के लिए कुछ अप्सराएं भी होनी चाहिए। अब, बेटा! देखो, उसने कल्पना की तो अप्सरा जी भी आ गईं। अब सेवाएं होने लगीं। वह मानव बड़ा प्रसन्न हो रहा था। परन्तु कुछ ही क्षण में वह कल्पना जागी- अरे, यदि अब तेरी मृत-लोक वाली पत्नी होती तो तेरे ऊपर डण्डा भी होता! अब, मुनिवरो। देखो, वह मानव जैसे ही उन्होंने कल्पना की तो मृत-लोक वाली पत्नी जी भी आ पहुंची। तो मानो देखो, जब पत्नी आ गई तो डण्डे सहित, मानो वह मानव आगे है और पत्नी उसके पश्चात् है।

मेरे प्यारे! देखो, इतने में देवर्षि नारद मुनि देखो, वह स्वर्ग में से आ गये, भगवान् विष्णु के द्वार से। उन्होंने दृष्टिपात किया, यह क्या खिलवाड़ हो रहा है? मुनिवरो। देवर्षि नारद मुनि ने कहा अपनी दीर्घ वाणी से, अरे, मानव! कल्पना को त्याग! अब मुनिवरों! देखो, नारद मुनि की वाणी को श्रवण करके कल्पना को त्यागा, तो बेटा! न तो पत्नी है, न मानो अप्सराएं हैं, न आसन है, उस कल्प-वृक्ष के नीचे वह विद्यमान है। देवर्षि नारद मुनि बोले, अरे, महाधूर्त। यह तूने ये क्या कल्पनांए की हैं और यहां कल्प वृक्ष के नीचे आकर भी तूने विलासों की कल्पनाएं की हैं? और, यह विलासों की कल्पना मानो देखो, यह विकृति-वृत्त कहलाती हैं। मानो यह तुमने क्या कल्पना की? अरे, तुम स्वर्ग में जाने की कल्पना करते तो तुम स्वर्ग में चले जाते! अरे, मानव! यदि तू मोक्ष की कल्पना करते, तो मोक्ष में चले जाते! अरे, मानव! यह तुमने क्या कल्पना की है, कल्प-वृक्ष के नीचे?

सु-कल्पना

तो मेरे प्यारे! देखो, दार्शनिक कहता है, यह विचार देता हुआ कि यह संसार एक प्रकार का कल्प-वृक्ष है।

यहाँ मानव को कल्पना करनी है, मानव कल्पना करने के लिए आया है। इससे मानव को मोक्ष में जाने की कल्पना करनी चाहिए। मेरे प्यारे! यहाँ जब आ गया है, मानव तो विलासिता की कल्पना न करता हुआ, यहाँ विज्ञानवेत्ता, आध्यात्मिक-विज्ञानवेत्ता बनने की कल्पना करनी चाहिए कि जिससे मैं प्रभु के द्वार पर जा सकूँ, जिससे मैं प्रभु के राष्ट्र में निर्द्वन्द्व हो करके विचरण कर सकूँ, जिससे मैं परमात्मा की अनुपम सृष्टि को प्रायः दृष्टिपात कर सकूँ।

तो मेरे पुत्रो! देखो, ऐसी विचारधारा वैदिक आचार्यो ने दी कि यह संसार एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। अरे, मानव! तुझे तो कल्पना करनी ही है, इसलिए तू सु और महान् से महान! काल्पनिक बन करके कल्पना करता हुआ तू संसार-सागर से पार होता चल। तो मेरे प्यारे! देखो, वैदिक आचार्यो ने, ऋषि-मुनियों ने कहा कि- यह संसार क्या है? तो संसार के ऊपर टिप्पणी देते हुए ऋषियों ने कहा कि यह संसार तो एक प्रकार का कल्प-वृक्ष है। अरे, मानव! जैसी भी कल्पना करोगे वैसा ही मानो देखो, तुम बनते चले जाओगे, वैसा ही तुम्हारा एक नृत्य होने लगेगा।

याज्ञिक-द्रव्य से स्वर्ग

तो मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, जिस काल में मानव विचित्र से विचित्र अपनी उड़ाने उड़ता रहता है, प्राणी अपने में याज्ञिक बनता रहता है। तो मुनिवरो। देखो, वृत्तं ब्रह्माः जैसे एक आचार्य ने वर्णन करते हुए कहा, कि द्रव्य तो तुम्हें देना ही है, द्रव्य तो तुम्हारे द्वार से जाना है, मानो देखो, इसलिए ऐसी कल्पना करो जिससे द्रव्य के द्वारा तुम्हें स्वर्ग प्राप्त हो जाएं।

शिकामकेतु उद्दालक का याग-विज्ञान

मेरे पुत्रो! देखो, मुझे एक वाक्य स्मरण आ रहा है। एक समय, बेटा! देखो, उद्दालक गोत्र में एक ऋष हुए हैं, जिन ऋषि का नाम शिकामकेतु उद्दालक कहलाता था। मेरे प्यारे! उनकी पत्नी का नाम शकुन्तका कहलाया। तो वह शकुन्तका और महर्षि शिकामकेतु मुनि महाराज दोनों अपने आसन पर विद्यमान थे। प्रातः काल का समय था, मानो देखो, नित्यप्रति वह याग करते थे। पति-पत्नियों का यह कर्त्तव्य था कि वह प्रातःकालीन याग करना और याग के द्वारा जो तरंगों का प्रादुर्भाव होता था, उन -प्रादुभांव ब्रहे, मानो उससे तरंगों को जानना- वे तरंगें कहाँ-कहाँ जाती हैं? क्या-क्या उनका स्वरूप बनता है?

वैशम्पायन ऋषि की कल्पना

तो मुनिवरों! देखो, शकुन्तका और शिकामकेतु उद्दालक दोनो, बेटा! अपने आसन पर विद्यमान थे। एक समय कहीं से भ्रमण करते हुए महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज आ पहुँचे। और महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज ने कहा कि- भगवन्! यह तुम क्या कर रहे हो? क्या मनन कर रहे हो, उन्होंने कहा कि-हम ऐसे, मानो ऐसे वृक्ष के नीचे इस समय विद्यमान हैं, जिस वृक्ष के नीचे हम कुछ कल्पना कर रहे हैं, मानो कुछ मनन और चिन्तन कर रहे हैं। हम यह विचार कर रहे हैं कि हमारा शब्द, हमारा जो नृत्य है, हमारा जो क्रियाकलाप है, वह इतना गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाना चाहिए, जिससे द्यौ-मण्डल में मानो देखो, उसकी स्थिति हो जाएं। हम द्यौ-मण्डल में प्रवेश करना चाहते हैं, क्योंकि हमारे पूर्वज भी, उनके शब्द, उनके क्रियाकलाप भी प्रायः वहीं भ्रमण कर रहे हैं। तो हमारी यह उत्कट इच्छा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा, वैशम्पायन बोले कि प्रभु! यह विज्ञान तो मानो मैंने बहुत पुरातन काल में अपने आचार्यो के द्वारा श्रवण किया था। परन्तु देखो, मैं याग करता हूँ। इस मानो तुम्हारे इस विज्ञान को इन

क्रियाकलापों को मानो अपने से दूरी कर गया। आज मुझे प्रातःकालीन ऐसा विचार आया कि मैं आज उद्दालक गोत्र में मेरा गमन होना चाहिए, क्योंकि उद्दालक गोत्र में ऐसे-ऐसे ऋषि हुए हैं, जिन्होंने अपने पूर्वजों का दर्शन किया है, जिन्होंने अपने पूर्वजों के विज्ञान के माध्यम से, याग के माध्यम से उस विज्ञान को जान करके और कल्प-वर्णों में अपने में रत्त करा करके उन क्रियाकलापों में उन्होंने दृष्टिपात किया है। तो प्रभु! मुझे भी आप कुछ दर्शन कराईए।

शकुन्तका का यज्ञ-रथ-दर्शन

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन, इस वाक्य को देखो, यह प्रश्न करके अपनी स्थली पर विद्यमान हो गये। परन्तु देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक और शकुन्तका दोनों अपने में अध्ययन करने लगे। जब अध्ययन करने लगे तो एक वेदमन्त्र उन्हें कहीं प्राप्त हुआ और वह वेदमन्त्र कह रहा था, चित्रं भवितां वस्वतं ब्रह्मे द्यौ रथ प्रह्व वाचन्नमं ब्रह्व कृणः । मेरे प्यारे! देखो, यह वेदमन्त्र उन्हें स्मरण आया। इस वेदमन्त्र के द्वारा वह प्रायः अपने में याज्ञिक बने हुए थे और याग करते थे। तो उस समय शकुन्तका ने कहा, प्रभु! यह वेदमन्त्र यह कहता है कि अग्नि की जो धारा हैं, अग्नि की धाराओं पर मानो शब्द हमारा वो अश्वथ हो करके, वह गमन करता है, तो प्रभु! हम उस गमन किए हुए मानो देखो, रथ को दृष्टिपात करना चाहते हैं। यह वेदमन्त्र, -रथं ब्रह्मः रथं ब्रहे ब्राचं अग्नि द्यौ रथं ब्रह्मः अग्नं ब्रहे वृत्तः, प्रभु! यह वेदमन्त्र ऐसा कहता है। अब उस वेदमन्त्र के ऊपर, बेटा! अपने विचार-विनिमय करने के लिए हम तत्पर हैं। तो उद्दालक गोत्र में, जब इस प्रकार उद्दालक गोत्री ऋषि ने इस प्रकार का वर्णन किया तो वह शकुन्तका बोली कि -प्रभु! मेरा विचार तो यह आ रहा है कि वेदमन्त्र में कोई वाक्य मिथ्या तो हुआ नहीं करता है, वेदमन्त्र तो सदैव सार्थक होता है, परन्तु देखो, इसका क्रियाकलाप, इसके गर्भ में जो भी क्रियाकलाप है, उसे हम साक्षात्कार दृष्टिपात करना चाहते हैं।

अग्नि-वरण

तो मेरे पुत्रो! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है, मानो देखो, उन दोनों ने अपने में अध्ययन किया और अध्ययन करके अग्नि की धाराओं को जाना, क्योंकि नाना प्रकार की, अग्नि होती है। यह अग्नि, मानो देखो, जब अग्नि-सूक्त में प्रवेश करते हैं, तो यह अग्नि काष्ठों में, यह अग्नि वाणी के स्वरूप में, यही अग्नि क्रियाकलापों के स्वरूप में रत्त रहने वाली है। यही अग्नि द्यौ में प्रवेश करने वाली है, यही अग्नि सूर्य के रूप में मानो देखो, एक ऊर्ज्वा बन करके रहती है। यही अग्नि काष्ठों में रहने वाली है, यही अग्नि मानो देखो, राष्ट्रीय पद्धतियों में भी निहित रहती है। बेटा! यही अग्नि है, जो ब्रह्म-ज्ञानियों के अन्तर्हृदयों में मानो देखो, ज्ञान और हृदया का दोनों का समन्वय हो करके ही इन्द्रियों का समावेश हो करके, बेटा! वह भी एक विचित्र अग्नि कहलाती है।

आज, बेटा! मैं अग्नि के सम्बन्ध में तो कोई विशेष विवेचना तो देने नहीं आया हूँ। अग्नि का स्वरूप तो अपने ही रूप में एक विचित्र और विशिष्ठ माना गया हैं आओ, बेटा! देखो, मैं तुम्हें उस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, शकुन्तका ने अपने आचार्य से यह प्रश्न किया कि - देवो ब्रह्मः हे भगवान् हमारा अग्नि का जो स्वरूप है, मानो देखो, वाणी का जो स्वरूप है यही तो हम जानना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, जैसे एक मानव, अश्व पर सवार हो जाता है और गमन करता है। इसी प्रकार देखो, एक शब्द है, वह शब्द अग्नि की धाराओं पर गमन करता है। अग्नि की धाराओं पर अश्वथ हो करके, वह गमन करता है, उसका द्यौ-लोक ही मानो गमन कहलाया गया है। यह इस द्यौ-लोक में प्रवेश करके मानो देखो, वह द्यौ में, प्रवेशिका में, देखो, वह अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यन्त्रों के द्वारा, ऋषिवर उद्दालक गोत्रीय ऋषि उसको यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात करते रहे हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, आज मैं तुम्हें यह वर्णन करने के लिए चला हूँ कि विज्ञान अपनी स्थलियों में बड़ा विचित्र रहा हैं। अनुसन्धानवेत्ताओं ने, कल्पना करने वालों ने अपनी बड़ी विचित्र-विचित्र उड़ाने उड़ी हैं। अग्नि की धाराओं पर बेटा! देखो, ब्रह्माण्ड का दर्शन किया अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, अपने पूर्वजों के चरित्र, देखो, चित्र और उनका चरित्र, उनका शब्द और उनकी क्रियावृत्तियों में मानो वह प्रायः अपने में दृष्टिपात करते रहे हैं।

तो आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम, बेटा! अपने जीवन को एक ऐसी स्थली पर ले जाएं, ऐसे क्रियाक्लापों में ले जाएं जहां हम बेटा! परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता और मानो देखो, वेद रूपी प्रकाश को हम जान सकें। और, वह विज्ञान के माध्यम से जानें या हम आध्यात्मिक वेत्ता बन करके जानें। परन्तु हमारा एक ही लक्ष्य रहा है, परम्परागतों से कि हम अपने में उसको जानने वाले बनें।

विष्णु और रक्षक-विज्ञान

बेटा! देखो, हमारे यहाँ एक अग्नि का शब्द आता है, एक विष्णु का शब्द आता है, जो आज भी हमारे वैदिक पाठ्यक्रम में चल रहा था। वैदिक पाठ्यक्रम में मानो विष्णु की विवेचना आ रही थी। और, वह विस्रु रूपं ब्रह्मणाः ब्रहे वृत्तम, मानो देखो, विष्णु के बहुत से शब्दों की कृतियाँ आती रहती हैं, तो हमारे यहाँ विज्ञान को भी विष्णु कहते हैं। क्योंकि विज्ञज्ञन ध्रुवा-ऊर्ध्वा भवितां कृतं देवत्यं ब्रह्मः लोकः मानो देखो, वही विष्णु का स्वरूप हमारे यहाँ मानो देखो, एक नृत्य करता रहता है। चाहे वह राष्ट्रीय स्थली पर हो, चाहे वह वैज्ञानिक स्वरूप में हो, चाहे वह माता के रूप में हो, चाहे वह, राष्ट्रवेत्ताओं के रूप में क्यों न हो, चाहे वह आत्मत्त्व के रूप में हो। परन्तु देखो, इसके ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियाँ की जाती हैं। परन्तु शब्द, केवल वैदिक शब्द एक ही इस पर सजातीय होता है- रक्षक, बेटा! जो रक्षा करता है। वह मानो एक ही शब्द है, जो सजातीय होता है। वह सजातीय, मेरे प्यारे! देखो, रक्षा का शब्द आता है।

रक्षा में, माता, आत्मा, राजा और सर्वत्र मानो देखो, एक रक्षा के गर्भ में आ जाता है। तो बेटा! देखो, एक-एक शब्द में संसार की प्रतिभा और, संसार का ज्ञान और विज्ञान, मेरे पुत्रो! देखो, निहित रहता है। आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल विचार-विनिमय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, परमात्मा के अनूठे विज्ञान, अनूठे देवतव को जानते हुए, बेटा! देखो, अपने में विज्ञानवेत्ता बन जाएं। और, विज्ञानवेत्ता बन करके ही मानव अपने में मानवीयता को प्राप्त कर सकता है, अपनी मानसिक प्रवृत्ति को महान बना सकता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक और बड़ा विचित्र, मानो नृत्य कहलाया गया है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? कि हम परमं ब्रह्मे लोकाम् मेरे पुत्रो! देखो, जब शिकामकेतु उद्दालक और शकुन्तका का दोनों का यह परस्पर विचार-विनिमय हो रहा था, तो मुनिवरों! देखो, वैशम्पायान मुनि ने कहा- प्रभु! यह वाक्य वास्तव में हम वैदिक शब्दों में या अपने यहाँ हम अनुसन्धान करते रहते थे। परन्तु जब यह आपका सम्पर्क हमें प्राप्त हुआ, तो प्रायः हमें यह दृष्टिपात हुआ है कि देखो, विज्ञान अपने में बड़ा महान् और सार्थक तत्त्व वाला कहलाया गया है।

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि शाम ब्रह्म वृत्तम् वैशम्पायन मुनि महाराज, बेटा! यह अपने में सन्तुष्ट हो करके कि विज्ञान कितना सार्थक तत्व है, विज्ञान कितना महान् क्रियाकलाप हैं कि वह तरंगों पर विद्यमान हो करके तरंगवादी-जगत् को जान करके सागर से पार हो जाता है ! ऐसा सन्तुष्ट हो करके ऋषि, बेटा! वहाँ से गमन करता है। और, बेटा! देखो, अपने विद्यालय, अपने आश्रम में जा पहुंचे, जहाँ वह देखो, शिक्षा का, अपना एक-

केन्द्रित हो करके अपने में अनुसन्धान करने लगे।

संसार एक वैज्ञानिक-चिन्तनशाला

मेरे प्यारे! देखो, उद्दालकां ब्रह्मरुधं वृत्तं ब्रह्मे, मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की विचारधाराएं, मानवीय जगत् में मनन और देखो, वृत्तियों में रत्त रही हैं। मेरे पुत्रो! देखो, विचार केवल यह कि दार्शनिक कहते हैं कि यह संसार एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। और द्वितीय दार्शनिक कहता है कि नहीं, यह संसार, यह कल्पवृक्ष तो है ही, परन्तु यह संसार एक प्रकार की मानो देखो, यह विचारशाला है, विज्ञानशाला है, यहाँ प्रत्येक मानव वैज्ञानिक बनने के लिए आया है।

प्रत्येक मानव, बेटा! जब भी संसार में आता है, तो विज्ञान की तरंगें इसके मस्तिष्क में गमन करने लगती हैं और गमन करते-करते मानो देखो, इतनी गम्भीर मुद्रा में चला जाता है, कि अपने मस्तिष्क के ऊपर इतना मानो देखो, चिन्तन-मनन करता है, मस्तिष्क के द्वारा कि बेटा! देखो, यह मेधावी, ऋतम्भरा, प्रज्ञावी बन करके, मुनिवरों! देखो, सागर से पार होने का प्रयास करता है। और, अपने हृदय-अगम्य ज्योति में ज्योतिवान् को दृष्टिपात करने लगता है। तो बेटा! यह संसार एक प्रकार की चिन्तनशाला, मननशाला है और यहाँ प्रत्येक मानव उस मूल के द्वारा विज्ञानवेत्ता बनना चाहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, हमें वैज्ञानिक बनना चाहिए। विज्ञान क्या कहता है? प्रत्येक मानव विज्ञान में रत्त होना चाहता है। मेरी प्यारी माता है, वह अपने में विज्ञान को चिन्तन में लाना चाहती है।

गर्भवती कौशल्या का विज्ञानवाद

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब माता कौशल्या के गर्भ में, मानो देखो, राम गर्भ में पनप रहे थे। तो उस समय, वह अपने में चिन्तन करती रहती थी और विज्ञान के माध्यम से अपने गर्भस्थल की जो मानो देखो, स्थिति थी, उसके ऊपर मनन करती थी। मानो देखो, मनस्त्व-प्राणत्व को एकाग्र करते हुए देखो, अपने यहाँ वह बाल्य पनप रहा है। बाल्य, शिशु बन करके पनप रहा है, देवता जिसकी रक्षा कर रहे हैं। मानो देखो, माता उसको अपने अन्तर्हृदय से प्रायः दृष्टिपात करती है और आलिंगन करती है। विचारती रहती है कि यही तो प्रभु! का एक अनूठा विज्ञान है। इस विज्ञान को मुझे जानना है। मेरे प्यारे! देखो, इसी विज्ञान में माता कौशल्या रत्त होती रहती थी।

एक समय, बेटा! देखो, माता कौशल्या अपने में मानो शान्त-मुद्रा में विद्यमान थी। जब शान्त-मुद्रा में थी, तो मानो भ्रमण करके माता अरून्धती उनके समीप पहुंची। अरून्धती बोली, पुत्री! क्या विचार रही हो? तो उस समय उन्होंने कहा, प्रभु! मैं यह विचार रही हूँ कि-प्रभु! की जो विज्ञानशाला है, उसी चिन्तन में लगी हूँ कि-प्रभु की वह जो विज्ञानशाला है, यह कितनी विचित्र है, जिसमें मानो मेरे गर्भ में एक बाल्य पनप रहा हैं, एक शिशु पनप रहा है और वह शिशु मानो देवताओं के रक्षण में हैं! उन देवताओं को मैं नहीं प्रदान कर रही हूँ। वह प्रभु का इतना अद्भुत विज्ञान है कि वह स्वतः ही अमृत को प्रदान कर रहे हैं। जैसे मानो देखो, चन्द्रमा उसे अमृत दे रहा है, सूर्य प्रकाश दे रहा है, अग्नि ऊष्णा बना रही है, और वायु प्राण दे रहा है और देखो, यह अन्तरिक्ष उसे अवकाश दे रहा है, और आपो उसका आसन बना हुआ है। आपो में ही मानो देखो, वह रत्त रहने वाला है, आपो ही पाशे है, आपो ओढ़न है, आपो ही आसन बना हुआ है, और मानं ब्रह्मे यह पृथ्वी गुरूतव दे रही हैं। कैसा, मेरे प्रभु का यह अनूठा विज्ञान है! इस विज्ञान को मैं दृष्टिपात कर रही हूँ, मातेश्वरी! कि यह विज्ञान मुझे आचार्य ने ही वर्णन नहीं कराया। कहीं-कहीं देखो, महर्षि श्वेती मुनि के विचारों में ऐसा आता रहा है। मैं उसे अनुसन्धान में लाती रही हूँ। तो मानो देखो, मैं दृष्टिपात कर रही हूँ कि-प्रभु! का विज्ञान कितना अनूठा है! कितना विचित्र है कि मानो एक

बिन्दु से लिपटा हुआ शिशु गर्भ में प्रवेश हो जाता है। देवता रक्षा करते हैं! देवता अमृत प्रदान कर देते हैं! वाह रे, मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्त हैं।

मेरे प्यारे! देखो, माता वैज्ञानिक बनना चाहती है। माता विज्ञान में रत्त हो गई है और विचार रही है कि विज्ञानां विज्ञानं समब्रहे वाचन्नमं ब्रह्मः लोकाम् मेरे प्यारे! इस विज्ञान को मैं दृष्टिपात करना चाहती हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, माता भी विज्ञानवेत्ता बनना चाहती है। पितर भी विज्ञानवेत्ता बनना चाहता है।

तो बेटा! विचार क्या? यह संसार एक प्रकार का जहाँ कल्पवृक्ष है, वहीं यह चिन्तनशाला है। बेटा! इस संसारशाला से पार हो जायें। यह संसार बड़ा विचित्र है, इसको चिन्तन में लाने वाला, बेटा! चिन्तन में लाता रहता है, मनन करता रहता है। तो यह, बेटा! आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है?-कि यह संसार एक प्रकार का बेटा! देखो, देने-लेने की व्यापारशाला है, किसी दार्शनिक ने कहा, यह संसार कल्प वृक्ष है। किसी ने कहा, यह चिन्तनशाला है, मननशाला है।

बेटा! आज का विचार क्या? -कि इसके ऊपर भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ी जाती हैं। कल मुझे समय मिलेगा तो कल, बेटा! देखो, विज्ञानशाला के सम्बन्ध में, देखो, और ऊँची उड़ाने उड़ी जा सकेंगी। आज का वाक् अब यह समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम की महिमा अथवा उसके अनन्तमयी ब्रह्माण्ड को जान करके और इस संसार-सागर से पार होने का प्रयास करें। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। रासना

३ पिण्ड से ब्रह्माण्ड का मापन १४ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहा हैं जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जितना भी हमें यह जड़ जगत वह चैतन्य जगत दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड में वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते हैं क्योंकि जितना भी संसार तरङ्ग के रूप में हो, चाहे वह परमाणु रूप में विद्यमान हो, उसमें एक चेतना अपना क्रियाकलाप कर रही हैं और उस चेतना में सर्वत्र ब्रह्माण्ड अपने में रत्त हो रहा हैं और वह अपने में दृष्टिपात आता रहता है।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गा रहा हैं, क्योंकि उसकी महिमा, एक-एक कण-कण में व्याप्त है, एक-एक परमाणु में मानो वही दृष्टिगोचर हो रहा हैं, जिसके ऊपर मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक बेटा! अनुसन्धान करता चला आया हैं, और विचारता रहता हैं, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, और गम्भीर मुद्राओं में मुद्रित होता रहा हैं परन्तु मनन करने वालों ने, मनन करते-करते बेटा! मौन हो गएं हैं परन्तु मौन हो करके उसका वर्णन नही किया गया तो इसीलिए वे परमपिता परमात्मा सदैव एक रहस्य का विषय बने रहते हैं क्योंकि वह रहस्तम माना गया हैं जिसके ऊपर मानव बहुत गम्भीर मुद्राओं में मुद्रित होता रहा है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र जहाँ उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार का विचार-विनिमय करता रहा है वहाँ आज का हमारा वेदमन्त्र, पुनः यही कह रहा है कि यह संसार का चिन्तन करने वालों ने और मनन करने वालों ने बेटा! इस संसार के ऊपर विचारा है, आज का हमारा वेदमन्त्र ब्रह्मणश्चं ब्रह्वे व्रत्यं ब्रहा वर्णसुतं वेद का वाक् कहता है कि वह जो परमात्मा का अनुपम जगत है अथवा ब्रह्माण्ड हैं यह अपने-अपने दृष्टिकोण से मापने वाला मापता रहा हैं यह सृष्टि के प्रारम्भ से मापा जा रहा हैं और प्रत्येक मानव उसके ऊपर विचारता रहता हैं, इस संसार को बेटा! अपने-अपने दृष्टिकोण से मापने का प्रयास किया है, और उसी में वह सर्व परीक्षित हो जाता हैं और उसी में वह रत्त हो जाता हैं, कि मैं अपने में प्रायः महान और विचित्रतव में रत्त होता रहूँ। मेरे प्यारे! इस ब्रह्माण्ड को राष्ट्रवेत्ताओं ने एक राष्ट्रशाला के रूप में स्वीकार किया हैं, और यह कहा कि यह संसार तो एक राष्ट्रवेत्ताओं की शाला है यहाँ प्रत्येक मानव राष्ट्र का निर्माण करता रहा है, और राष्ट्र के सम्बन्ध में प्रायः विचारता रहा हैं, और यह विचारता रहता है कि यहाँ प्रत्येक मानव अनुशासित होना चाहिए वही राष्ट्रवाद कहलाया गया हैं हमारे यहाँ दो प्रकार के राष्ट्रवेत्ताओं की विवेचना आती रहती हैं राष्ट्रीय सम्बन्ध में विचारते रहते हैं परन्तु देखो, उन्होंने अपना मन्थन करते-करते यह कहा क्या यह संसार मानो देखो, राष्ट्रशाला है, प्रत्येक मानव यहाँ अनुशासित होने के लिए आया हैं, प्रत्येक मानव को अपनी इन्द्रियों पर संयम करना चाहिए।

ब्रह्म आहुति

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, जिस काल में बेटा! राजा जनक के यहाँ नाना प्रकार के याग होते रहते थे उनके यहाँ सबसे प्रथम मानो देखो, देव याग और ब्रह्मयाग होते रहते थे। और ब्रह्मयाग के पश्चात उनके यहाँ मानो ब्रह्मयागी पुरूष मानो अपनी-अपनी आहुतियाँ प्रदान करते रहते थें मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मयाग की आहुति के सम्बन्ध में बहुत ऊर्ध्वा में अपनी उड़ाने उड़ी हैं और विचारा जाता है कि यह ब्रह्म आहुति क्या है? बेटा! ब्रह्म की महिमा ब्रह्म के ज्ञान और विज्ञान की एक विवेचना करता हुआ कल्पना और मानव अपने में अन्वेषण

करता हुआ बेटा! उसकी आहुति देता रहता हैं, उसको हूत करता रहता हैं हूत का अभिप्रायः यह है क्या एक मानव का प्रारम्भ है और एक मानव का अन्त हैं बेटा! देखो, मानव के अन्तर्हृदय से एक भावना का जन्म होता हैं, और उस भावना का अन्त मानो देखो, अग्नि रूपी ज्ञान में स्वाहा हो जाता हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, वह एक ब्रह्मयाग क्या उसको मानो देवाहुति भी कहते हैं और जब ब्रह्म का चिन्तन करता हैं, और ब्रह्म के सम्बन्ध में वह ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ने लगता है। क्या ब्रह्म क्या है? ब्रह्म साकार है या निराकार हैं ब्रह्म मानो एक चेतना हैं एक सर्वत्र वह परिणत रूप है और वह ब्रह्म ही इस ब्रह्माण्ड का नेतृतव करने वाले हैं मानो निर्माणवेत्ता हैं, इसकी रचना के गर्भ में भी निहित रहते हैं, जब इस प्रकार मनन करता हुआ बेटा! वह मौन हो जाता हैं, तो उसकी वह ब्रह्म आहुति कहलाती हैं। वह ब्रह्म आहुति में अपने को हूत कर देता हैं।

अनुशासन

तो इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, राजा जनक के यहाँ ब्रह्मयाग होते रहते थे, ब्रह्मवेत्ता अपने-अपने आसनों पर विद्यमान रहते और वह अपनी-अपनी मानो चर्चाएं करते और मनन करते ब्रह्म के सम्बन्ध में परन्तु अपना-अपना जितना उनका सीमित अनुशासित एक विषय होता उसके ऊपर अपनी विवेचना करके वह मौन हो जाते और अपनी आहुति दे करके अपने आसन पर विद्यमान हो जाते, इसी प्रकार बेटा! राजा जनक स्वयं मानो देखो, राष्ट्रपिता, राष्ट्रवेत्ता होने से वह यह कहा करते थे कि राष्ट्रं ब्रह्मे वर्णा सुता तो बेटा! जब वह ऋषि-मुनियों के मध्य में यह उच्चारण करते कि यह राष्ट्रवाद क्या हैं? तो वह ऋषि-मुनि एक बहुत सुन्दर संक्षिप्त में, एक उत्तर देते, कि अनुशासन का नाम याग माना गया हैं। जब प्रत्येक राजा और प्रजा दोनों अनुशासित हो जाते है। तो राष्ट्र अपनी स्थलियों में पवित्र बन जाता हैं। मानो देखो, गुरु और शिष्य जब बेटा! दोनों अनुशासित हो जाते हैं अनुशासन में परिणत होते हैं तो मानो देखो, वह याग की प्रतिभा अपने में अनुशासन का नाम ही गुरु शिष्य की प्रणाली ऊँची बन जाती हैं। मानो देखो, जब माता और पिता दोनों मानो देखो, बाल्य के मध्य मे विद्यमान हैं जब वह दोनो अनुशासित होते हैं अनुशासन में बरतते हैं अपने जीवन को तो मानो की वह एक अनुशासन हैं वह एक राष्ट्रीयता की एक परिणीधि और परिवृत्तियों में रत्त होती रही हैं।

विज्ञान

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता हैं क्या अनुशासन का नाम ही एक राष्ट्रवाद कहा गया है परन्तु देखो, यहाँ मनन करने वालों ने, इस संसार को राष्ट्रवेत्ता ही नही कहा है, उन्होंने कहा है कि यह जो संसार है, यह एक प्रकार की चिन्तन और मनन शाला है और विज्ञानशाला हैं यहाँ प्रत्येक मानव चिन्तन करता हैं, मनन करता है और चिन्तन और मनन करने के पश्चात, विज्ञानशाला में प्रवेश हो जाता हैं। बेटा! विज्ञान में रत्त हो जाता हैं मुझे स्मरण आता रहता हैं मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ, नाना ब्रह्मचारी, ब्रह्मवेत्ता विद्यमान हैं परन्तु देखो, वह जब अणुवृत्तियों में रत्त होते हैं तो अपने में अनुसन्धान करते रहते है कि अनुसन्धान करते-करते वह विज्ञानशाला में रत्त होते हुए भी विज्ञान में रत्त हो जाते हैं तो मेरे प्यारे! देखो, जब विज्ञान की उड़ाने उड़ने लगते तो विज्ञान अपनी स्थलियों में बड़ा अनूठा रहा हैं बड़ा एक विचार वान रहा हैं एक-एक परमाणु से दुसरे परमाणु का समन्वय करना उस परमाणु के ऊपर अनुशासित होना और अनुशासित हो करके मानो उसमें जो क्रियाएं उत्पन्न होती हैं जो क्रियाओं का प्रादुर्भाव होता हैं उसको मानो देखो, क्रिया में लाना और बाह्य और आन्तरिक दोनो जगत में प्रवेश कराने का नाम बेटा! देखो, इसको विज्ञान कहा जाता हैं। हमारे यहाँ विज्ञानशालाओं में विराजमान हो करके विज्ञानेवता बेटा! अपने उड़ाने उड़ने लगते हैं विचार आता रहता है बेटा! मैं महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ अपने विचार ले जा रहा था, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ मुनिवरों! देखो, नाना ऋषि-

ज्ञान कर्म और उपासना

मुनियों का एक समूह एकत्रित होता रहा और उस समूह में यह वार्त्ता होती रही, कि महाराज! यह विज्ञान क्या है? उन्होंने कहा कि विज्ञान वह है जब हम अपनी स्थलियों मे विद्यमान हो जाते हैं, और विद्यमान हो करके एक परमाणु है या वेद का एक वेदमन्त्र हैं और वह मन्त्र अपने में धातु पिपाद का वर्णन कर रहा हैं। मानो देखो, धातु पिपाद को हम साकार रूप देना चाहते हैं मन के द्वारा मानो देखो, मेधावी में प्रवेश कर जाते हैं, और मेधावी से ऋतम्भरा में प्रवेश कर जाते है। तो ऋतम्भरा से प्रज्ञावी मानो देखो, प्रज्ञावी में प्रवेश हो करके और ब्रह्म के इस ब्रह्माण्ड को हम दृष्टिपात करने लगते हैं और ब्रह्माण्ड की एक माला बनाना प्रारम्भ करते हैं। क्योंकि ब्रह्माण्ड एक माला के सदृश्य हैं जैसे माला मानो नाना मनके एक सूत्र में पिरोएं जाते हैं और उस सूत्र में पिरोएं हुए होने से मानो देखो, वह माला बन जाती हैं इसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड एक माला के सदृश्य माना गया हैं यह जगत भी माला के सदृश्य हैं बेटा! माला हम किसे कहते हैं? माला कहते हैं जो नाना मनके एक सूत्र में पिरोएं जाते है। उसके ऊपर एक सुमेरू होता हैं, एक ब्रह्म गन्थि होती हैं, तो उसको हमारे यहाँ माला कहा जाता है। तो इसी प्रकार प्रत्येक मानव एक माला को अपने में धारण कर रहा हैं, जैसे माता पितर है, वह मानो देखो, पुत्रवत हैं, आचार्य गण है, राष्ट्र और प्रजा हैं, यह एक दूसरे की बेटा! देखो, माला के सदृश्य माने गएं हैं, जैसे विद्यालय में ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहते हैं अचार्य जन मानो सुमेरू बन करके ब्रह्मचारियों की एक माला बना करके, उनके ज्ञान और विज्ञान की ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ने लगते हैं और उड़ाने उड़ने पर मेरे पुत्रों! देखो, उसी सूत्र की वार्त्ता प्रगट करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, अपने मे रत्त होते रहे हैं, जैसे मैं एक आज माला की चर्चा कर रहा था, एक माला मे ले जाना चाहता हूँ।

याग में होता

मेरे पुत्रों! देखो, एक समय महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने विद्यालय में विराजमान थे, जिस विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा हैं क्या याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में लगभग मानो देखो, ब्रह्मश्रोत्रीय ब्रह्मचारी थे, वह प्रायः अध्ययन करते रहते थे, उसमे भी अनन्य रहते। मेरे प्यारे! देखो, जब ब्रह्मचारी अपने में याज्ञिक बनने करने के लिए तत्पर हो गये। एक समय प्रातः काल का समय था, प्रातः कालीन बेटा! उनके यहाँ, एक याग होता था उस याग के पश्चात देवपूजा के पश्चात कुछ ब्रह्म चर्चायें होती, ब्रह्म चर्चाओं के पश्चात मानो देखो, जो श्रोत्रीय चर्चाएं होती, तो मेरे प्यारे! देखो, जब चर्चाएं होने लगी, विचार-विनिमय होने लगा, तो ब्रह्मचारियों ने एक रूपक बनाया ब्रह्मचारियों ने एक रूपक बना करके एक उनमे यज्ञमान बना एक होता बना परन्तु देखो, एक प्रश्नकर्त्ता बना। तो मुनिवरों! देखो, प्रश्न करने वाला आचार्य से कहता है हे प्रभु! एक यज्ञमान विद्यमान हैं यह यज्ञमान एक याग करना चाहता है तो कितने होता होने चाहिए।

तो मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने यह वाक् श्रवण किया तो याज्ञवल्क्य प्रातःकालीन बोले कि हे ब्रह्मचारियों! इस यज्ञमान को याग चौबीस होताओं से करना चाहिए मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। द्वितीय जब उन्होंने प्रश्न किया कि महाराज! यह यज्ञमान याग करना चाहता है कि कितने होता होने चाहिए उन्होने उत्तर दिया कि इसमें सत्रह होता होने चाहिए सत्रह होताओं से मानो देखो, याग करते हैं ऋत्विज अपने आसन पर विद्यमान हो करके, यागों में रत्त हो जाते हैं। मेरे पुत्रों! ब्रह्मचारी ने पुनः प्रश्नकर्त्ता ने कहा-प्रभु! यह यज्ञमान याग करना चाहता है, तो कितने होता होने चाहिए? उन्होंने उत्तर दिया कि इसमें ग्यारह होता होने चाहिएं। यह ग्यारह होताओं से याग करने वाला है तो मेरे पुत्रों! देखो, प्रश्नकर्त्ता ने प्रश्न किया कि-प्रभु! यह यज्ञमान याग करना चाहता है कितने होता होने चाहिए? उन्होंने कहा इसमें लगभग देखो, नौ होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! पुनः यह प्रश्न किया क्या महाराज यज्ञमान याग करना चाहता है, ऋषिवर कितने होताओं से याग करे? उन्होंने कहा कि इसमें

लगभग सप्त होता सप्त होता, यज्ञं ब्रह्व कृते मानो सप्त होताओं से याग होना चाहिएं। मेरे पुत्रों! देखो, पुनः जब यह प्रश्न किया क्या महाराज यज्ञमान विद्यमान है वह याग करना चाहता है तो कितने होता हों? उन्होंने पंचम होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने पुनः ऋषि से प्रश्न किया कि महाराज! यह यज्ञमान याग करना चाहता है कितने होता हों? उन्होंने कहा याग जब होतां ब्रह्मे ब्रहे याग करना चाहता है तो तीन होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे पुत्रों! जब पुनः यह प्रश्न किया तो दो पर आ गएं जब पुनः यह प्रश्न किया कि महाराज! यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता होने चाहिएं? तो उन्होंने उत्तर दिया कि एको ब्रह्मे होतां ब्रह्मण ब्रहे कृतं लोकाः क्या एक ही होता से याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गएं और अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके उन्होंने एक यज्ञदत ब्रह्मचारी से कहा, तुम प्रश्न करो, आचार्य से क्या एक मानो चौबीस होता कौन से होते हैं, यज्ञशाला में जिनके यज्ञमान याग करता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने जब यह प्रश्न किया कि महाराज! हम ब्रह्मचारी हैं, और ब्रह्मवर्चोसि की उपासना करते रहते हैं, और ब्रह्मविद्या का अध्ययन करते हुए मानो देखो, इए संसार की जो देखो, यह जो ध्रुवा में विद्या है, इसका भी अध्ययन करते रहते हैं, हम यह जानना चाहते हैं, क्या प्रभु यज्ञमान के चौबीस होता कौन से हैं? जिनके द्वारा वह याग करता हैं।

तो मेरे पुत्रों! देखो, हमारा ऋषि-मुनियों की बड़ी ऊर्ध्वा में एक देन रही हैं। विचार-विनिमय करने वालों के लिए बड़ी एक विचित्र उड़ान है क्या ब्रह्माण्ड और पिण्ड को मापने का मुनिवरों! देखो, उन्होंने प्रयास किया हैं ऋषि-मुनियों ने जब भी जिस भी काल में ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में प्रवेश हुआ हैं तो मानो देखो, आचार्य ने उस ब्रह्मचारी को ब्रह्माण्ड से मापने का प्रयास किया जब ब्रह्मचारी उसे ब्रह्माण्ड से और पिण्ड से उसे दोनों को एक ही सूत्र में ला देता हैं दोनों का एक सूत्र के मनके बना देता हैं तो मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचारी एक महान बन करके देखो, आचार्य का नामोकरण ऊर्ध्वा में गति कराने लगता हैं।

तो मेरे पुत्रों! मुझे वह काल स्मरण है जब याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यज्ञदत ने प्रश्न किया कि महाराज! यज्ञमान कहता है कि चौबीस होता कौन से हैं? तो बेटा! देखो, उन्होंने पिण्ड को ब्रह्माण्ड से मापने का प्रयास किया, और एक माला बनाई, जो मानो देखो, ब्रह्माण्ड और पिण्ड में दोनों में उनका एकोकीकरण हो जाएं, एकोकीकरण हो करके मानो अपने में अपनेपन की धारा में प्रतीत हो जाएं। तो मेरे पुत्रों! उन्होंने उत्तर दिया क्या व्रत्यं ब्रह्मे यह जो चौबीस होता है, मानो देखो, यह जो हमारा यह शरीर हैं, या यह ब्रह्माण्ड है, जो हमें बाह्य जगत में दृष्टिपात आ रहा हैं, इस ब्रह्माण्ड में और पिण्ड में मानो देखो, पिण्ड में दस प्राण कहलाए जाते हैं, दस प्राण है जिनको प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, देवदत, धनंजय कुरू और कृकल यह दस प्राण कहलाते हैं। यह दसों प्राण है, और पांच इसमें ज्ञानेन्द्रियाँ है, और पांच कर्मेन्द्रियां हैं, और मन और बुद्धि चित्त और अहंकार यह मानो देखो, चतुष अन्तःकरण कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो चतुष अन्तःकरण हैं, और दस इन्द्रियाँ हैं, और दस प्राण हैं, यह चौबीस होता कहलाते है। यह जो शरीर रूपी याग चल रहा है, या ब्रह्माण्ड रूपी यह जो यज्ञशाला में देखो, प्रत्येक प्राणी अपनी-अपनी आहुति दे रहा हैं बेटा! हूत कर रहा हैं, माता अपने गर्भस्थल में बाल्य का पालन करती हुई, मानो अपनी आहुति दे रही हैं पालना कर रही है इसी प्रकार एक प्राणी दूसरें में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात आता हैं, मेरे प्यारे! देखो, गो नाम का पशु हैं, वह पय दे रहा हैं, और उसे मानव पान करता है, तो ओज और तेज की उत्पति कर रहा हैं, उसी ओज और तेज की उत्पति से अपने क्रियाकलापों में तत्पर हो जाता हैं। अपने मे विचारने लगता हैं। मेरे प्यारे! एक प्राणी चाहे वह मुनिवरों! देखो, जैसे लोक-लोकान्तरों की प्रतिभा हैं, एक लोक दूसरे में पिरोया हुआ सा प्रायः हमे दृष्टिपात आता हैं, तो जैसे यह ब्रह्माण्ड एक दूसरे में हूत हो रहा है। एक दूसरे में माला सी प्रायः हमें दृष्टिपात आती रहती है। इसी प्रकार यह मानो देखो,

चौबीस होताओं की यज्ञशाला चौबीस होताओं का यह एक माला है। जिसको यज्ञमान अपने में धारण करके मानो देखो, अपने में याग कर रहा हैं। यागां ब्रह्मणां ब्रहे यागां रूद्रो भव प्रमाणां ब्रहे व्रताः मेरे प्यारे! देखो, वह कहता है कि यह याग हो रहा हैं, परन्तु देखो, जब योगीजन इन्ही सर्वत्रता को एक सूत्र में ला करके अनुशासन करता हुआ मानो देखो, प्राण को अपान में, अपान को प्राण में, और प्राण को उदान में, उदान को समान में, समान को व्यान में, और व्यान को मानो देखो, नाग और देवदत में प्रवेश कराता हुआ मेरे पुत्रों! जब एकोकीकरण करता है तो वह योगी मुनिवरों! देखो, लघु मस्तिष्क में प्रवेश कर जाता हैं। और जब वह लघु मस्तिष्क में चला जाता हैं तो लघु मस्तिष्क मे एक रेणकेतु मस्तिष्क होता हैं, उस मस्तिष्क में प्रवेश हो करके मेरे पुत्रों! देखो, यह जो परमात्मा का यह जो अनूठा जगत हैं, रचाया हुआ हैं, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर है, बेटा! देखो, उसमें यह योगेश्वर विचरण करने लगता हैं। यह योगेश्वर मुनिवरों! देखो, अपने में विचरण करने लगता हैं, तो मुनिवरों! देखो, यह मानो देखो, गुरूतव को जानता हैं, और गुरूतव सम्बन्धी जितने भी लोक-लोकान्तर हैं, जिसमे पार्थिव तत्त्व प्रधान हैं, उनको जान करके मेरे प्यारे! तरलतव परमाणुओं में रत्त हो जाता हैं। जहाँ तरलतव परमाणु तरलतव मानो देखो, लोक-लोकान्तर अपनी स्थलियों में गति कर रहा हैं, उन तरलतव लोकों में प्रवेश हो करके देखो, वह तेजोमयी में प्रवेश हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, मही में प्रवेश हो करके, यह ब्रह्माण्ड उस योगी के लिए अनुशासित हो करके बेटा! यह ब्रह्माण्ड एक खिलवाड बन जाता हैं। एक अपनी आभा में बेटा! उदघृत हो जाता है, और यह माला बनाने के लिए क्या माला पिरोना जानता है, और माला को एक दूसरें में दृष्टिपात करने लगता हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, कैसे दृष्टिपात करता हैं यह तो तुम्हें कई कालो में वर्णन करते हुए कहा था, आज मुनिवरों! उस क्षेत्र में तो जाना नही चाहता हूँ, परन्तु संक्षिप्त परिचय देने के लिए आया हूँ, मेरे पुत्रों! देखो, विज्ञान के वांगमय में प्रवेश हो जाता है। वह यागेश्वर मेरे पुत्रों! देखो, जैसे यह पार्थिव तत्त्व हैं, या पृथ्वियों की गणना करने लगता हैं, जब वह योगी अपने लघु मस्तिष्क में पृथ्वियां उसे प्रत्यक्षता में दृष्टिपात आने लगती है। तो मेरे पुत्रों! वह तीस लाख पृथ्वियों तक अब तक मुनिवरों! देखो, गणना में ला सका है, पृथ्वियों को परन्तु देखो, जब सूत्र में सूत्रित होत हैं, तो विचार आता है, कि यह तो न होने के तुल्य हैं, परन्तु तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी है और उस माला को धारण करने वाला मेरे पुत्रों! देखो, सूर्य कहलाता हैं, सूर्य इतना विशाल मण्डल हैं, इतना विशाल है, मेरे पुत्रों! जब विज्ञान के परमाणुओं मे विज्ञान के वांगमय में वैज्ञानिक अपने मे विज्ञानता में प्रवेश होता हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, तीस लाख पृथ्वियों की माला को धारण करने वाला सूर्य है। परन्तु जब अनुसन्धान अन्वेषण की वृत्तियों में रत्त होता है, अनुशासित होता हुआ तो मेरे पुत्रों! एक सहस्र सूर्यो की माला बन जाती हैं। एक सहस्र सूर्यो की माला को धारण करने वाला बेटा! बृहस्पति कहलाता है। एक माला दूसरें में पिरोई हुई जा रही हैं, और कैसा मेरे प्यारे प्रभु का कैसा यह अनूठा जगत हैं, बेटा! एक माला दूसरें में पिरोयी जा रही हैं, उसको धारण कर रहा है, एक सहस्र सूर्यों की माला बन करके बेटा! उस माला को कौन धारण कर रहा हैं। कौन अपने में पिरो रहा है बेटा! उसको अपने में धारण करने वाला बृहस्पति कहलाता हैं। परन्तु जब अनुसन्धान अन्वेषण प्रारम्भ हुआ ऋषि-मुनियों ने गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके और मुनिवरों! देखो, अपने में उसका अन्वृत करने लगे, तो ऐसा प्रतीत हुआ ऋषि-मुनियों को अनभव हुआ क्या मुनिवरों! देखो, एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बनी, जिसको बेटा! आरुणि मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, मेरे प्यारे! देखो, वह माला बन करके जब आरुणि ने अपने में धारण कर लिया। तो विचारा गया कि एक सहस्र आरुणि मण्डलों की माला बनी, जिसको ध्रुव मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, ध्रुव मण्डल इतना विशाल मण्डल है, जिसमें देखो, एक सहस्र बृहस्पति मण्डलों की माला बन करके वह अपने में धारण कर रहा हैं। अपने में पिरो रहा हैं, जैसे मुनिवरों! मेरी

पुत्री जब अपने में शृंगारित होती हैं, तो मानो स्वर्ण के मनकों की माला को प्रायः अपने में धारण करके वह सजातीय बन जाती हैं। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, ध्रुव मण्डल अपने मे सजातीय बन जाता हैं, और वह कैसा अनुपम सजातीय हैं, क्या उसके ऊपर जब विचार किया गया, बहुत से ऋषि-मुनियों का बेटा! समूह विराजमान हुआ और विराजमान हो करके चिन्तन और मनन करने लगे तो बेटा! देखो, उसकी भी माला बनी, जब ध्रुव एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनी, तो उसको बेटा! देखो, मूल नक्षत्र में अपने में धारण कर लिया। मेरे प्यारे! देखो, मूल नक्षत्रों की माला बनी, एक सहस्र मूल नक्षत्रों की जब माला बनी, तो उसको बेटा! देखो, स्वाति ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र स्वाति मण्डलों की माला बनी जिसको बेटा! देखो, पुष्पकेतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र पुष्पकेतु मण्डलों की माला बनी, जिसको मेरे प्यारे! अचंग मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला बनी जिसको बेटा! देखो, स्वाकृति मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र स्वाति केतु मण्डलों की माला बनी, जिसको बेटा! देखो, धनेत केतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र धनेत केतु मण्डलों की माला बनी, जिसको बेटा! देखो, हमारे यहाँ गन्धर्व मण्डल ने अपने में धारण कर लिया।

मेरे पुत्रों! देखो, इस माला का अन्तिम जो मनका है वह गन्धर्व कहलाता हैं मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है जब ऋषि-मुनियों का ब्रह्माण्ड पिण्ड और ब्रह्माण्ड दोनों की जब तत्पर विचार-विनिमय होने लगा, तो मेरे पुत्रों! देखो, एक अरब, सतानवें करोड़, उन्नतीस लाख, उन्नचसवी हजार, पांच सौ इक्कसठ के लगभग बेटा! इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बना। मेरे प्यारे! देखो, यह सौर मण्डल बन गया जब वैज्ञानिक अपने में विज्ञानवेत्ता विचारते रहते हैं भारद्वाज मुनि के यहाँ भी यह विचारा गया और देखो, उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु उद्दालक मुनि के भी यहाँ इस प्रकार का अन्वेषण होता रहा परन्तु यही अन्वेषण बेटा! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ ब्रह्मचारी और ब्रह्मवेत्ता अपने में अनुसन्धान और अन्वेषण करते रहे तो मेरे प्यारे! देखो, जब इसके ऊपर और विचार-विनिमय हुआ तो मुनिवरों! देखो, लगभग इतने सौर मण्डलों की एक आकाश गंगा बन गई, इतने सौर मण्डलों की जब एक आकाश गंगा बनी, तो बेटा! देखो, एक अरब निन्यानवें करोड़ और इक्कतीस लाख पिचानवें हजार और देखो, नौ सौ नवासी के लगभग इतनी आकाश गंगाओं की बेटा! एक निहारिका बनी। एक निहारिका के रूप में बेटा! वह लोक-लोकान्तर बेटा! दृष्टिपात आने लगे। मेरे प्यारे प्रभु का यह कैसा अनुपम, कैसा ब्रह्माण्ड है बेटा! जिसके ऊपर मानव विचारता ही रहता हैं, यह कैसी मेरे देव की विचारधारा हैं, जिसके ऊपर मानव विचारता रहता हैं, चिन्तन करता रहता हैं, मनन करता रहता हैं, और अपनी प्रवृत्तियों को लघु मस्तिष्क में ले जा करके उनके ऊपर आरूढ़ हो जाता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब अवन्तिकाएं इतनी बन गई, तो आगे समाधिष्ट होने वाले वेद के आचार्यों ने यह कहा भई! अनुसन्धान प्रारम्भ किया अन्वेषण करने लगे विचारने लगे, विचारते विचारते बेटा! बहुत दूरी चले गये, विचार करके उन्होंने विचारा कि मानो एक अरब पौने दो अरब के लगभग मानो इस प्रकार की अवन्तिकाओं की एक निहारिका बनी, निहारिका पर आ करके बेटा! योगेश्वर अपने पर आरूढ़ हो गया, और शान्त हो गया और यह विचारा कि-प्रभु! का ब्रह्माण्ड तो एक अनन्तमयी दृष्टिपात कहलाता हैं। यह अनन्तमयी है, तो इसीलिए वेद के आचार्यों ने समाधिष्ट हो करके अनुशासन वेत्ताओं ने अन्त में यह कहा, कि परमपिता परमात्मा की जो रचना हैं, परमात्मा का जो अनूठा जगत हैं, यह परमाणुवाद का जो जगत है, यह अनन्तमयी कहलाया गया हैं। इसीलिए बेटा! देखो, ऋषि-मुनियों ने यह कहा क्या परमपिता परमात्मा की जो प्रतिभा हैं, अथवा उसका जो आरूढ़ वृत्ति होना हैं, तो मानो देखो, वह सब रहस्यमयी बना हुआ हैं। अन्त में यह कहा कि रहस्यमी बना हुआ हैं। तो मेरे

प्यारे! देखो, इन मालाओं को धारण करने वाला वेद के ऋषि ने याज्ञवल्क्य मुनि ने महाराज ने ब्रह्मचारियों के मध्य में विराजमान हो करके, यह कहा कि हे ब्रह्मचारियों! यह माला है जिस माला को धारण करने वाला वैज्ञानिक जन अपने में अनुशासित होता हुआ, मानो देखो, मन बुद्धि, चित, अहंकार इसको सर्वत्र को चिन्तन में लाता हुआ, यह मानो देखो, हमारे यहाँ चौबीस जो होता हैं। इनके द्वारा बाह्य जगत का याग हो रहा हैं, और आन्तरिक जगत में भी याग हो रहा हैं, यह दोनों प्रकार जो याग हो रहा है, इस याग को तुम अपने चिन्तन में लाने का प्रयास करो, अपना एक चिन्तनीय विषय बनाते रहो, जिससे तुम्हारा देखो, मस्तिष्क लघु मस्तिष्क रेणवृत्तिका मस्तिष्क मानो देखो, सर्वत्रता में इस ब्रह्माण्ड के चित्रण होते रहें, और वह माला को अपने में तुम धारण करते रहो। संसार में तीन प्रकार की माला कहलाई गई हैं। वैज्ञानिकों के युग में जब प्रवेश होते हैं, तो वैज्ञानिक कहते हैं, गुरूतव तरलतव और तेजोमयी यह तीन प्रकार का परमाणुवाद हैं। इन तीनों प्रकार के परमाणुवाद में मुनिवरों! देखो, सर्वत्र ब्रह्माण्ड मुनिवरों! देखो, अपने में गति कर रहा हैं, और वह गतिवान हो रहा हैं, यही मानवीयता में है, मानो देखो, मन बुद्धि चित्त और अहंकार यह सर्वत्र मानो देखो, इनमें तीन प्रकार का परमाणु गतिवान हो जाता हैं। मानो देखो, तरलतव तेजो ब्रह्मे और मुनिवरों! देखो, गुरूतव यह अपने में गतिवान रहता हैं, और वायु जिसे हम प्राणं ब्रहे प्राणं गतं ब्रह्मे उसको प्राण कहते हैं, उसमें यह तीनों परमाणु गतिवान होते हैं, और उसी में देखो, मम ब्रहा गति देने वाला है, और अन्तरिक्ष में देखो, वह गतिवान होते मानो देखो, वह गति देने वाला गतिवान होना और परमाणु होनो बेटा! देखो, इनको पंच वृत्तियों में मापा गया है, और मापने से क्या मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार यह चतुष अन्तःकरण कहलाता हैं।

(यहाँ पर शब्द ध्वनि में सूक्ष्म सी रूकावट के उपरान्त शुरू हुई हैं व आगे का प्रवचन पुस्तक में भी नही हैं कृपया ध्यान दें आगे का प्रवचन पढ़ कर तो यह मुझे इसी प्रवचन का लग रहा हैं)

तो मेरे प्यारे! विचारवेत्ता ने याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारियों! यह चौबीस होताओं के द्वारा यज्ञमान याग करता हैं चौबीस होता होने चाहिएं चौबीस होताओं के द्वारा ही याग हुआ करता हैं। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा कि ब्रह्माण्ड के ही मानो चौबीस स्तम्भ माने गएं हैं जिसके ऊपर यह ब्रह्माण्ड मानो ये जगत अपनी स्थलियों में गतिवान हो रहा हैं, मेरे प्यारे! देखो, इसमें दस प्राण है, दस मेरे प्यारे! देखो, पंच महाभूत की प्रवृत्तियां हैं पञ्च प्रवृतियां मेरे पुत्रों! देखो, इसी आधार पर यह ब्रह्माण्ड स्थित हो रहा हैं। यह आन्तरिक जगत और बाह्य जगत दोनों, एक दूसरे की सहकारिता में तत्पर रहते हैं। मानो देखो, यह जो बाह्य जो चित्त का मण्डल है मानो देखो, एक परमाणु जहां दूसरा परमाणु रत्त होता रहता हैं। मेरे पुत्रों! मुझे वह वाक् स्मरण आ रहा हैं, जब मुनिवरों! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से यह प्रश्न किया गया, कि महाराज! हम यह जानना चाहते हैं क्या यह मानो देखो, जो चित्त का मण्डल बना हुआ है, यह चित्त का मण्डल जो बाह्य जगत है यह क्या हैं? मुनिवरों! देखो, ऋषि ने उत्तर दिया कि बाह्य यह जो हमारी जो शब्दावली हैं, अग्नि की और ज्ञान की धाराओं पर वेदमन्त्रों की धाराओं पर विद्यमान हो करके मानो देखो, उनकी जो स्थिति है वह अन्तरिक्ष में द्यौ में प्रवेश हो जाती है, वह द्यौ में प्रवेश हो करके द्यौ आभा में रत्त रहने वाला हैं। मानो तीन इन्ही चरणों के साथ वह प्रवृत्तियों का गमन होता हुआ शब्दों के ऊपर मानो देखो, शब्दं ब्रह्मे, अग्नि का शब्द का दोनों का समन्वय हो करके वह चित्त और क्रियाकलाप ज्यों के त्यों बने रहते है परन्तु देखो, उसको हमारे यहाँ चित्त का मण्डल, वृत्तियों में, वह कृत माना गया हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, इससे ब्रह्मचारी सन्तुष्ट हुए, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु। इसका विचार यह हुआ कि चित्त का मण्डल ही बना रहता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, चित्त का मण्डल जब आन्तरिक जगत में बना रहता है, जहाँ जन्म-जन्मान्तरों के

संस्कार इसमें विद्यमान होते हैं, और जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारो का जो अक्षय होता हैं वह तपस्या के द्वारा होता हैं, मनन करने से होता है, चिन्तन मनन और देखो, विज्ञान की वृत्तियों से उनका क्षय होता है, जिससे मानव अपनी मानवीयता को धारण करता हुआ बेटा! देखो, लोकों में रमण करने वाला मेरे पुत्रों! देखो, अपने में अपनेपन का वह दर्शन करने लगता हैं। अपने में अभ्योदय होने लगता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें करने नही आया हूँ, विचार यह केवल प्रगट करने के लिए आया हूँ, बेटा! आज मैं तुम्हे बहुत गम्भीर मुद्रा में ले गया हूँ, यह बड़ी विचित्र मुद्रा है जब बेटा! देखो, एकान्त स्थलियों पर विद्यमान होते रहें, उस काल में बेटा! इन मुद्राओं की चर्चाएं हुआ करती थी। जब वेद का वाक् न्यौदा में मन्त्र प्रायः स्मरण आते रहते हैं, तो प्रायः देखो, इन मालाओं की चर्चा होती हैं, एक माला नही, दो माला नही, अनन्तमयी मालाओं की गणना होने लगती हैं बेटा! देखो, एक-एक शब्द में माला को दृष्टिपात करने वाले ऋषि-मुनि रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, एक गान गा रहा है, वेदमन्त्रों का और वह अपने में एक द्वितीय मानो देखो, उसी को माला बना करके अपने में धारण कर रहा हैं, आचार्य माला बना रहा है। शिष्य अपने में उस माला को अपने में धारण कर रहा हैं। और माला को धारण करके उसे अपने कण्ठ में उसे मानो देखो, अपने कण्ठ में सजातीय बना करके वह माला धारी बन जाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे बहुत-सा काल स्मरण आता रहता हैं, जब मैं इन वाक्यों मे जाता हूँ, गम्भीर मुद्रा में जब मुद्रित होता हूँ, तो बेटा! मुझे ऐसा दृष्टिपात आने लगता हैं कैसी सुन्दर माला हैं, कैसा प्रिय जगत है? यह मेरे देव का देव ने कैसी एक मानो यह मालामयी जगत का निर्माण किया, जिस निर्माणशाला में प्रत्येक मानव अपने में निर्माणित होता रहा हैं और विचारता रहा है।

तो मुनिवरों! देखो, विज्ञान अपनी स्थलियों में बड़ा अनूठा बन करके रहा हैं, तो ऋषि-मुनियों ने कहा है, क्या यह संसार जहाँ एक प्रकार का कल्पवृक्ष हैं, जहाँ देने लेने की व्यापारशाला हैं, जहाँ एक चिन्तनशाला हैं, जहाँ एक मनन शाला हैं, वहाँ मानो देखो, एक प्रकार की यह विज्ञानशाला हैं, प्रत्येक मानव यहाँ वैज्ञानिक बनने के लिए आया हैं, माता अपने में अनुसन्धान करती है।

मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! माता मलदाल्सा एक समय जब माता के गर्भ में चतुर्थ माह का समय था तो माता एक समय प्राण और मन का दोनों का निरोध करने लगी, जब दोनो का निरोध करके उदान प्राण के साथ में तो वहाँ भी जब उदान का उन्होंने निरोध किया तो बेटा! देखो, वह माता के गर्भस्थल मे जो एक शिशु था, वह भिन्न-भिन्न प्रकार की मालाओं को अपने में धारण कर रहा हैं, तो माता मलदाल्सा मग्न होने लगी, और यह बोली की यह जो सर्वत्र एक ही शब्द हैं, एक-एक मानो हमारा क्रियाकलाप हैं, वह सब विज्ञान से गुथा हुआ है। विज्ञान से ओत-प्रोत हो रहा हैं। मानो देखो, जिससे उदान, समान और व्यान और देखो, अपने में ब्रहे अपने में देखो, और कृतियों में रत्त हो करके, जब उसमें पुट लगती है, तो गर्भाशय में जो शिशु पनप रहा है कौन निर्माण कर रहा हैं, कैसे निर्माण हो रहा हैं, तो माता उसे साक्षात्कार दृष्टिपात कर लेती हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, माता भी वैज्ञानिक बनना चाहती हैं, विज्ञान में रत्त हो रही हैं तो इसी प्रकार मैंने इससे पूर्व काल में बेटा! वेद का मन्त्र कहता है विज्ञानं ब्रहे सम्भवा लोकां यह संसार एक प्रकार की विज्ञानशाला हैं, यहाँ प्रत्येक मानव बेटा! देखो, वैज्ञानिक बनने के लिए आया हैं तो यह संसार मेरे पुत्रों! देखो, एक प्रकार की विज्ञानशाला हैं, इस विज्ञान के ऊपर हमें प्रायः अपने में मनन करना चाहिए। तो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से ब्रह्मचारियों ने कहा हे भगवन! आपको धन्य हैं, आपने सबसे प्रथम जो चौबीस होताओं का जो आपने पूर्ण रूप में एक वर्णन किया हैं, उससे एक-एक क्षण विचारों का आपने हमें मनन कराया है, जिसका इसका शेष भाग तो बहुत रह गया हैं। हे प्रभु! यह चौबीस होताओं के द्वारा जो याग हो रहा हैं, यह याग तो ब्रह्माण्ड की प्रतिभा

कहलाती हैं, मेरे पुत्रों! याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि ब्रह्माण्ड की नही यह आन्तरिक जगत और बाह्य जगत दोनो का विश्लेषण कर रहा हैं, दोनों की प्रतिभा का वर्णन कर रहा हैं बाह्य जगत और आन्तरिक जगत में जो क्रियाकलाप हो रहा हैं, उन क्रियाकलापों का दोनो का समन्वय हो करके योगेश्वर अपने लघु मस्तिष्क और रेणकेतु मस्तिष्क में इस ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन कर लेता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह ब्रह्मचारी मौन हो गएं ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! कल हम याग करेंगें याग के पश्चात आप से देखो, पुनः प्रश्न होगा। मानो देखो, जो यह सत्रह होताओं का याग हो रहा हैं, इसकी चर्चा तो बेटा! हम कल ही प्रगट करेंगें। आज का वाक् हमारा क्या कह रहा हैं, क्या चौबीस होताओं के द्वारा यज्ञमान याग करता हैं इसीलिए यज्ञमान को कहा गया है हे यज्ञमान! यह जो चौबीस होता हैं, यह तेरे मानो सुसज्जित बने रहें, यह श्रृंगारित होते रहे, जिससे यह लोक और परलोक दोनो ऊर्ध्वा में गति करते रहें। दोनों में तू अपने में सफलता को प्राप्त हो तो बेटा! यह महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने विद्यालय में यह आख्यिका वर्णन करते हुए कहा वह मौन हो गये।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा हैं, आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः यह है, कि परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों का समन्वय करते हुए, अपने मानव जीवन को ऊँचा बनाते रहे। मानव जीवन की प्रतिभा में हम प्रतिभाषित होते रहें, यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रगट करूंगा। मानो देखो, सत्रह होताओं के द्वारा जो याग होता हैं, वह कैसे हुआ करता हैं, यह चर्चाएं कल याज्ञवल्क्य और ब्रह्मचारियों के सम्पर्क में दोनों के विचार मेरे पुत्रों! हम कल प्रगट करेंगें। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रूद्रा माणा वाचन्नमा रथं आप्यां रथं ब्रीहि गन्धर्वा वाचन्नमाः ओ३म् रेवं भद्राणां आ पा

४ ज्ञान कर्म और उपासना १५ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गयें हैं, और वह यज्ञोमयी स्वरूप मानो याग उसका आयतन हैं, उसका गृह है, उसका सदन हैं, और वह उसी में ओत-प्रोत रहता हैं, इसीलिए हमारे यहाँ प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गाता रहता हैं, अथवा उसके गुणों का वर्णन करता रहता हैं तो इसीलिए परमपिता परमात्मा महती अथवा उसकी अनन्तता के ऊपर प्रायः हम विचार-विनिमय करते रहते हैं, और विचारते रहते हैं, कि यह परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया हैं, सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए, परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नही हुआ, जो उस परमपिता परमात्मा को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि वह सीमा से रहित हैं, वह सीमा में आने वाले नही हैं। नाना भौतिक विज्ञानवेत्ता हुए हैं, उन भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने अपना निर्णय देते-देते बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होते गए। अणु और परमाणु के ऊपर विचार-विनिमय करते रहें। परन्तु अन्तिम जो चरण रहा हैं, अन्तिम जो सूत्र रहा है, वह केवल ये कि अनन्तं ब्रह्मा अनन्तं रूद्रो भवं ब्रह्मा मेरे प्यारे! अनन्तता की आभा में मानव सदैव रत्त रहा हैं, और यह विचारता रहा है, कि वह अनन्तमयी है। परमाणुवाद की जो सीमा हैं, अणुवाद की कोई सीमा नही हैं। मानो वह विभु के गर्भ में सदैव वह निहित रहा है। वह उसी में रत्त होता रहा हैं।

गर्भस्थ बालक की प्रवृतियों का ज्ञान

तो आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना या चर्चाएं करने नही आया हूँ केवल परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसकी अनन्तमयी संसार रूपी याग और उस संसार के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करना प्रायः हमारा कर्तव्य रहा हैं हमारे जीवन में जो भी नाना रूढ़ियाँ बन गई है, उन रूढ़ियों को नष्ट करना है, और अपने को व्यापकवाद में सजातीय बनाना हैं। मानव का जीवन भी ये कहलाता है क्या हमने अपने जीवन को सजातीय बनाना हैं और विजातीयता को अपने से दूरी कर देना हैं। तो इसीलिए हमें अपने को ज्ञान और विज्ञान को अपने को सजातीय बनाना है और प्रभु के गर्भस्थल में अपने को स्वीकार करना हैं। जैसे माता का पुत्र माता के गर्भ के गर्भस्थल में निहित रहता है परन्तु माता अपने में धारण करती हुई मानो बाल्य भी अपने को उसमें व्यापक रूप में तपं सम्भवे कृतम् वह अपने को समर्पित कर देता हैं और वह समर्पित हो करके मानो देखो, उसकी रूढ़ियाँ मानो सब समाप्त हो जाती हैं इसी प्रकार मानव को भी अपने को ज्ञान और विज्ञान को सजातीय बनाना हैं, और रूढ़िवाद को समाप्त करना है, क्योंकि रूढ़ि मानव समाज के लिए नाना अनहित होती हैं, वह हितकर नही हो पाती। उसमें सदैव एक अग्नि की प्रतिभा होती हैं, अग्नि का एक चलन होता हैं, जिससे मानो देखो, उस रूढ़िवाद में परिणत हो करके, अपने को ही समाप्त कर देता हैं।

तो आओ, मैं विशेष इस सम्बन्ध में विवेचना नही, बड़ा गम्भीरतम रहस्य वेदमन्त्रों का चल रहा हैं, बहुत समय हो गया, जब ऋषि-मुनि अपनी-अपनी स्थलियों पर उपस्थित हो करके, और अपना-अपना विचार-विनिमय करते रहे हैं, महापुरूषों के सम्बन्ध में, अति मानव के सम्बन्ध में, अपनी वृत्तियों में याग और मानवीयता के सम्बन्ध में, एक सूत्र में पिरोने के लिए तत्पर रहे हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं भी तुम्हें उस सूत्र में पिरोना चाहता हूँ, जिस सूत्र में जाने के पश्चात हमारी माला

बन जाती हैं, मैंने बेटा! माला के सम्बन्ध में अपने कुछ विचार दिए माला के सम्बन्ध में तो जितना भी उच्चारण किया जाएं, उतना ही मानो सूक्ष्मतम माना गया हैं माला कहते हैं एक दूसरें में पिरोने को माला कहते हैं माला एक सूत्र में पिरोयी जाती हैं तो एक मानो कड़ी बन जाती हैं और वह एक माला बन जाती हैं मानो देखो, उस माला के सम्बन्ध में विशेष विचार मुझे देना नही बहुत पुरातन काल हुए बेटा! जब माला बनाते रहते थे, माला में सूत्र में बेटा! मनकों को पिरोते रहते थे चिन्तन मनन करते रहते थे और उस माला का इतना विस्तृत विचार अथवा इतना विस्तृत एक स्वरूप बन जाता था बेटा! मानव को मार्ग प्राप्त नही होता था। तो मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष विवेचना नही आज का हमारा वाक् क्या कह रहा हैं यागां भविते ब्रह्मणां मानो मैं यज्ञमान के सम्बन्ध में अपनी विचारधारा परम्परागतों से बेटा! हम वर्णित करते रहे हैं, और वर्णन करके बेटा! मैं आज तुम्हें एक गाथा के रूप में, एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ बेटा! देखो, यज्ञमान अपनी यज्ञस्थलियों पर विद्यमान हो करके, अध्वर्यु से कहता है हे अध्वर्यु! तू कौन हैं, अध्वर्यु कहता है, कि मैं वह अध्वर्यु हूँ, जो मानो हिंसा से रहित है। मैं मानो अहिंसक हूँ और अहिंसा और देखो, अहिंसक कहलाता हूँ, हिंसा में मैं रहित रहता हूँ, जितना भी द्रव्य संसार में हैं, वह द्रव्य मानो एक दूसरें में भक्षण, एक दूसरे में भोगतव, एक दूसरें में प्रतिपादित होता हुआ दृष्टिपात आता हैं, और वह होना चाहिए, परन्तु उसमें हिंसा नही होनी चाहिए, वह अहिंसक होना चाहिए जब मानव का हृदय इतना मानो अहिंसक बन जाता हैं, क्या मानव के हृदय से हिंसक प्राणी भी जब प्रीति करने लगते हैं तो जानो कि वह प्राणी देखो, अहिंसक बन गया, उसमें हिंसा नही रही है क्योंकि हिंसक प्राणी हिंसा को त्याग करके, अहिंसा के चरणों में या हृदय में हृदय से आलिंगन करता रहता हैं, तो जानो वह प्राणी अहिंसक हो गया है।

प्राण साधना से मोक्ष

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं आज योग के सम्बन्ध में, विचार देने के लिए नही आया, यह तो योग का एक अनुपम विचार हैं परन्तु आज मैं बेटा! तुम्हें याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, यज्ञमान, यज्ञमान बन करके आचार्य से यह प्रश्न करता हैं क्या महाराज! यह यज्ञमान याग करना चाहता हैं यह कितने होताओं से याग करे तो मानो देखो, उसमें आचार्य कहता है सर्वं ब्रहे कृतं वश्व श्वज्ञना ब्रह्मा वर्णो वाचन्न सो वृत्ति दिव्या तो वेद का आचार्य इसका उत्तर देता हुआ कहता है वेद में न्यौदा में मन्त्रों के माध्यम से कहता हैं, क्या जो मानव मानो देखो, सत्रह होताओं को अपने में स्थान देता है वह याग करने का अधिकारी कहलाता हैं, मेरे पुत्रों! देखो, सत्रह होता कौन से होते हैं? मानो देखो, दस प्राण है जिनको प्राण और उपप्राण कहते हैं, मेरे प्यारे! प्राण इस ब्रह्माण्ड में या मानव के शरीर में बेटा! दस प्राण कहलाते हैं, सबसे प्रथम देखो, प्राण को हमारे यहाँ प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान कहलाता है। मानो देखो, यह पांच प्राण बन गएं नाग, देवदत, धनञ्जय, कुरु और कृकल ये दस प्राण बन गये। मेरे प्यारे! देखो, इन दसों प्राणों को जो जानता हैं, मेरे पुत्रों! वही तो प्राणेश्वर कहलाता हैं। वे परमपिता परमात्मा को जान लेता है उन प्राणों की प्रतिक्रियाओं को जानता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ज्ञान इन प्राणो को अपने व्यान के द्वारा क्रिया के द्वारा जो मानो एक दूसरे में समावेश करना जानता हैं प्राण को अपान में, अपान को समान में, समान को उदान में, उदान को व्यान में और मुनिवरों! देखो, यह उप प्राण भी समाहित हो जाते हैं तो एकोकी प्राणों का सुगठित करता हुआ वह मेरे प्यारे! देखो, परमानन्द को आनन्द किसे कहते हैं वह आनन्दवत मानो देखो, मोक्ष की पगडण्डी का गामी बन जाता है। बेटा! मैं तुम्हें आज योग के क्षेत्र में नही ले जाऊंगा। केवल विचार-विनिमय संक्षिप्त परिचय हमें देना हैं और वह परिचय यह है कि अमृतं ब्रह्मा लोकां वाचन्नमं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, वह अप्रतं देखो, सत्रह तत्त्व कौन मानो दस प्राण हैं और पंच

मानो जो पंच महाभूतों की वासना है मुनिवरों! पन्द्रह और मन और बुद्धि मानो देखो, ये सत्रह तत्त्व कहलाते हैं। यह सत्रह से जुड़ा हुआ, मेरे पुत्रों! देखो, ये याग माना गया हैं। जहाँ मुनिवरों! देखो, दसों प्राण और पंच तन्मात्राएं एकोकीकरण में जब परिणत हो जाती हैं तो मेरे प्यारे! देखो, इसी में मन और बुद्धि दोनों संलग्न हो जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, प्राणतव और मनतव इन दोनों का एक ही सूत्र में सूत्रित हो करके मेरे प्यारे! देखो, एकोकीकरण होना ही हमारे यहाँ सत्रह तत्त्वों का मानो देखो, एक याग होता है। याग कहते हैं एकोकीकरण को जैसे हमारे यहाँ, साकल्य को भी एकोकीकरण कहते हैं तो मुनिवरों! देखो, इसको एकोकीकरण करना, अन्नं ब्रहे अग्नि में उसको हम हूत कर देते हैं, अग्नि में हूत बन करके यज्ञमान का शब्द और होताजनों का शब्द और मेरे पुत्रों! अग्नि के ऊपर अश्वस्थ सवार हो करके द्यौ लोक को प्राप्त होता रहता हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! यह विज्ञान की वार्त्ता हैं यह हमारे आध्यात्मिकवाद से मानो सुगठित रहता हैं विचार क्या मुनिवरों! देखो, जब इस शरीर स्थूल शरीर को त्यागा जाता है, तो यह सत्रह तत्त्व का जो शरीर रह जाता हैं, जिसमें दस प्राण पंच तन्मात्रा और मन और बुद्धि मानो देखो, आत्मा ही के ऊपर अश्वत हो करके, यह मेरे प्यारे! देखो, सूक्ष्म शरीर में मानो प्रविष्ट हो जाता हैं, सूक्ष्म शरीर में लय हो जाता हैं तो जब यह सूक्ष्म शरीर यह सत्रह तत्त्वों का कहलाता हैं, तो बेटा! इसमें मानो सूक्ष्म शरीर कहलाता हैं, इस सूक्ष्म शरीर में एक शरीर और होता हैं जिसका नाम मेरे पुत्रों! कारण शरीर कहलाया जाता हैं तो कारण शरीर और स्थूल शरीर ये दो शरीर और बने। मानो बेटा! इस आत्मा के तीन प्रकार के शरीर हैं स्थूल, सूक्ष्म, और कारण। मेरे पुत्रों! जब यह कारण में चला जाता है, तो स्थूल, ये चौबीस के स्थूल को त्याग करके सत्रह में जाता है और सत्रह को त्याग करके यह मुनिवरों! देखो, अपने कारण में लय हो जाता हैं कारण किसे कहते हैं? जहाँ बेटा! देखो, आत्मा का मौलिक गुण रह जाता हैं आत्मा का मौलिक गुण है ज्ञान और प्रयत्न ज्ञान और प्रयत्न को ले करके बेटा! यह आत्मा मानो देखो, इन सत्रह को भी त्याग करके केवल वासना के मात्र के रूप में बेटा! देखो, यह कारण में मुनिवरों! अपने को वृत्तियों में रत्त करा करके और जब यह मानो देखो, कारण मंगलं ब्रह्मे वृतं जब मुनिवरों! देखो, यह कारण शरीर अपने में देखो, ब्रह्मः ज्ञान और प्रयत्न के रूप में परिणत हो जाता हैं, तो उस समय बेटा! ये प्रभु कर दर्शन करता है, प्रभु के आँगन में प्रवेश कर जाता हैं और यह मोक्ष की पगडण्डी में बेटा! देखो, उस मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है, जिस पगडण्डी में गमन करने से बेटा! आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता हैं, इसका आनन्दमयी दोनों का गुण हैं, ज्ञान और प्रयत्न के दोनों के रूप में बेटा! एक आनन्दतव रहता है उस आनन्द में यह गमन करता रहता हैं।

प्राण से सूक्ष्मता

आओ, मेरे प्यारे! ऋषि कहते है आचार्य जनों ने याज्ञवल्क्य मनि महाराजा ने ब्रह्मचारियों से अपने विद्यालय में शिक्षा देते हुए कहा है कि हे ब्रह्मचारियों! आओ, तुम विराजमान हो करके इस आध्यात्मिकवाद की, इस मोक्षमयी पगडण्डी को ग्रहण करने लगो, जिस पगडण्डी के द्वारा तुम अपने में रत्त हो जाओ। तो बेटा! मैं प्राण की चर्चा कर रहा था आज मैं तुम्हें मोक्ष में ले जाना नही चाहता हूँ केवल विचार यह कि बेटा! आज मैं प्राणों की चर्चा कर रहा था, प्राण अपने में कितना महत्वदायक होता हैं, यह प्राण ही तो बेटा! भक्षण करता हैं, प्राण ही आहार करता हैं, प्राण ही क्षुधा का मूल बना हुआ हैं। मेरे प्यारे! देखो, यह प्राण ही संसार को सूक्ष्म रूप बना देता हैं और यह प्राण ही स्थूल रूप बना देता हैं, मेरे प्यारे! जो प्राण की गतियों को जानता हैं, वह महान बन जाता हैं। मुझे बेटा! वह काल स्मरण आता रहता हैं, त्रेता के काल का एक वाक् हैं, मुझे स्मरण है महर्षि स्वाहुकेतु ऋषि हुए हैं तो स्वाहाकेतु बड़े महान मानो प्राणों की प्रतिक्रिया को जानते थे और प्राणों मे प्राणवाद को पिरोना जानते थे जैसे विज्ञानवेत्ता, एक दूसरें परमाणु में को रत्त कर देता है और वह अपने में स्थूल रूप धारण करके

गमन करता है इसी प्रकार सुहावु ऋषि महाराज अपने में मुनिवरों! बड़े अध्ययनशील थे तो मुनिवरों! एक समय पम्पापुर के राजा मुनिवरों! देखो, वर्णन ब्रह्मे कृतम् भ्रमण कर रहे थे बालि ने अपने पुत्र को देखो, सुहावु ऋषि के द्वार पर गमन कराया और यह कहा कि महाराज! इसे प्राण की विद्या को प्रदान कराईए दीजिए ये प्राणं ब्रह्मा प्राणं ब्रहे व्रतं क्या महाराज! इसे प्राण की विद्या में रत्त करा दीजिए।

तो मुनिवरों! देखो, महाराजा बालि ने अपने पुत्र को देखो, सुहावु ऋषि के प्रार्थना की, कि महाराज! इसे धनुर्विद्या भी देना हैं। तो मुनिवरों! वह धनुर्विद्या को भी जानते थे, परमाणु विद्या को भी जानते थे, तो मुनिवरों! देखो, उन विद्याओं को मुनिवरों! उनके यहाँ पिच्चासी ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, इस प्रकार की प्राण सत्ता को पाने के लिए तो बेटा! देखो, प्राण को एक अंग में ले आना और उसे स्थिर कर देना, वह उसमें गुरूतव को भरण कर देना, यह किसी भी अंग में वह प्राण को लाना चाहते थे, उसी प्राण में मानो वह स्थिर हो जाना, तो यह क्रियाशील मानो प्रायः विद्यालयों में होना यह स्वाभाविक क्रियाकलाप हैं। तो मेरे प्यारे! मुझे ऐसा स्मरण है, क्या सुहावु मानो देखो, उनके पुत्र को विशेष विद्या प्रदान करने लगे क्योंकि महाराजा! अंगद बड़े सुयोग्य थे, और इस प्राण विद्या के लिए उन्हें बड़ी पिपासा रहती थी, तो प्राण विद्या को उन्होंने प्रदान किया जब प्राण विद्या में यह विशेषता थी, कि देखो, कोई भी बलिष्ठ ऐसा नही था, जो उसके अंग को जिस अंग में प्राण आ जाएं। उस प्राण वाले अंग को एक स्थली से दूसरी स्थली पर पंहुचा जाएं। मेरे प्यारे! देखो, वही देखो, बालि पुत्र अंगद ने उस विद्या को पान किया और सुहावु ने इस परमाणु विद्या को दिया उन्होंने कहा यह प्राणायाम मानो देखो, करो इसे मस्तिष्क में लो और मस्तिष्क में ले करके वह हृदय स्थली में प्रवेश करा दो, हृदय स्थली से इसमें मानो व्यान प्राण की पुट दे करके इसको एक पग में ले आओ, भुजों में ले आओ, मानो इस प्रकार की विद्या उन्हें प्रदान कराई। मेरे पुत्रों! देखो, इस विद्या को पान करने वाला ब्रह्मचारी कितना बलिष्ठ कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह विज्ञानं ब्रह्मणे व्रते, ऐसा मुझे स्मरण है बेटा! क्या देखो, राजा रावण के यहाँ, जब राम का दूत बन करके जब वह लंका की राज सभा में परिणत हुए, तो बेटा! उन्होंने अपने पग को प्राणों के सहित स्थिर कर दिया था, वह प्राण विद्या इतनी महान उनके द्वारा थी कि राजा रावण की सभा में कोई बलिष्ठ ऐसा नही था, जो उसके पग को एक स्थली से दूसरी स्थली पर पंहुचा दें। क्योंकि उसमें एक प्राण सत्ता थी, यह प्राणायाम करने की एक मानो देखो, भिन्न-भिन्न प्रकार का मानो देखो, एक क्रियाकलाप होता हैं, इन क्रियाकलापों में, जो मानव रत्त होता है वही मानव देखो, रत्त बन जाता है।

तो मेरे प्यारे! मुझे स्मरण रहता है क्या मानो देखो, इस प्रकार की प्राण शक्ति और प्राण की विद्या प्रायः हमारे ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में रही हैं, प्राण को अपान में जब लाता है योगेश्वर तो बेटा! देखो, पृथ्वी के रसातल का ज्ञान हो जाता हैं, इस पृथ्वी में कितनी दूरी पर कौन-सा खनिज हैं कौन-सा मानो देखो, स्वर्ण के परमाणु किस गति से गमन कर रहे हैं, उसी को वह जान लेता है मानो देखो, एक प्राण और देखो, जब प्राण और अपान का समन्वय होता हैं अब जब इसी को समान को नही मिलान कर दिया जाता है, तो भू लोक में जितना परमाणुवाद गुरूतव कितना हैं, तरलतव कितना हैं, और तेजामयी कितना है, उस परमाणुवाद को एकत्रित करने में लग जाता हैं। तो मेरे प्यारे! जब इसको समान की पुट लगा देता है व्यान के साथ में और प्राण और अपान के साथ में, तो मेरे प्यारे! देखो, मानव अपनी तीनों शरीरों की प्रतिक्रियाओं को जानने लगता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब इसको उदान में समाहित कर देता हैं तो मेरे प्यारे! देखो, द्यौ में गति के परमाणु और शब्द के साथ में कितना परमाणु गति कर रहा है, उसकी द्यौ लोक में क्या स्थिति होती हैं बेटा! उसको प्रायः जान लेता है।

गर्भस्थ परमाणुओं के ज्ञान से पुत्र की स्थिति का ज्ञान

तो मेरे प्यारे! यह तो विशाल वन है जिसमें मैं चला गया हूँ बड़ा विचित्र मानो देखो, एक परमाणुवाद हैं, आज में परमाणु विद्या का केवल परिचय देना नही, केवल संक्षिप्त परिचय देना है और वह परिचय यह है कि हम प्रायः अपने को जानने में कितने महान और पवित्रतम बन जाते हैं मानो देखो, इससे पूर्व काल में, मैं एक वाक् वर्णन कर रहा था माता मलदाल्सा के मन में यह विचार आया कि मैं अपने गर्भस्थल के परमाणुओं को गणना में लाना चाहती हूँ, कितने परमाणु गुरूतव के हैं कितने परमाणु मानो देखो, तरलतव के हैं और कितने परमाणु तेजोमयी के हैं, मानो देखो, जब तीनों परमाणुओं का समकालीन होते हैं, सम होते हैं तो जानो के माता के गर्भस्थल से पूर्ण आयु पुत्र का जन्म होता है। मेरे पुत्रों! माता इस वाक् को जानती रही है, तो प्रायः माता मलदाल्सा ने यह विचारा कि यह अग्नि के परमाणु विशेष हैं, उससे निम्न मानो मानो तरलतव के हैं, उससे निम्न गुरूतव के हैं, तो मानो की देखो, माता का पुत्र योगेश्वर बनेगा, तो मानो देखो, माता जब यह जान लेती है। क्या गुरूतव परमाणु विशेष हैं तरलतव परमाणु उससे भी विशेष हैं और मानो देखो, तेजोमयी परमाणु निम्न हैं तो जानो कि यह पुत्र, जन्म लेने वाला पुत्र मुझे सुखद नही पंहुचायेगा। तो मानो देखो, माता मलदाल्सा इस विद्या को जानती थी माता कौशल्या भी प्रायः इस विद्या को जानने वाली थी मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! जब माता प्राण के माध्यम से प्राण विद्या को ले करके संकल्पोंमयी विद्या के द्वारा अपने गर्भाशय के परमाणुओं को जान करके बालक की प्रवृत्तियों को गर्भ जान लेती है और वह मौन रहती हैं तो मानो देखो, माता अपने में बेटा! कितना याग कर रही है, यह यागां ब्रह्म लोकां मेरे प्यारे! देखो, वह याग में लगी हुई हैं, वह याग कर रही है याग का अभिप्रायः केवल यह है कि अपने को जानना, अपने को हूत करना बेटा! देखो, उसको याग कहा जाता हैं। याग का अभिप्रायः यह है कि हम साकल्य को अग्नि में प्रवेश करते है, अग्नि मानो देखो, उसके सूक्ष्म बना देती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह सूक्ष्म परमाणुओं की माला बनती है, एक दूसरी माला को माला निगलने लगती है, अशुद्ध माला को निगल जाती हैं, पवित्र माला का संचार हो जाता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, आज मैं तुम्हे देखो, ऐसे विचार में ले जा रहा हूँ, जो विचार हम सब ऋषि मुनि हम सब एकत्रित हो करके, वेदमन्त्र का, मुझे स्मरण आता रहता हैं उसके उदगार उसकी विशेषता उसकी महानता का वर्णन करते रहे हैं।

पितरों की श्रेणियां

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ उस आसन पर आना चाहता हूँ, कि यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हैं और यज्ञशाला में कहता है दिव्या से अपनी देवी से कहता है, हे दिव्या! आओ, आज हम देखो, पितरों के द्वारा जाना चाहते हैं हम पितरों की कोटि में जाना चाहते हैं तो मानो देखो, हमारे यहाँ पितर जनों की बड़ी विचित्र विवेचना मानी गई हैं हमारे यहाँ देखो, दो प्रकार के पितर कहलाते हैं, एक पितर वह कहलाता है जो मानो निम्न कोटि का होता हैं, एक पितर वह महान कहलाता हैं एक पितर वह जो उससे भी महान कहलाता हैं मेरे प्यारे! देखो, निम्न कोटि का जो पितर है वह सन्तानों की उत्पति करना यह निम्न कोटि का पितर हैं परन्तु देखो, उससे ऊर्ध्वा में वह पितर कहलाते हैं जो अपने जीवन को समाज और प्रभु के समर्पित कर देते है। मानो देखो, वह तृतीय श्रेणी के पितर कहलाते है और एक पितर वह होते हैं जो अपने को ब्रह्म में और अपने को ब्रह्म में ही दृष्टिपात करते हैं बेटा! देखो, वह ऊर्ध्वा श्रेणी के पितर कहलाते हैं तो मेरे प्यारे! देखो, हमें पितर बनना है देवी! कौन-सा पितर बनना है, वह पितर बनना है, जिससे हमारे शब्दों की विचारतं आकार बन करके शब्दों का द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता हैं और वह द्यौ लोक वाले शब्द ही, हमें प्राप्त हो जाएं, हम उसी में रत्त हो करके ब्रह्म

का और ब्रह्म को अपने में, अपने को ब्रह्म में दृष्टिपात करके जैसे देवताजन मानो प्रभु की आज्ञा से क्रियाकलाप करते हैं, मानो सूर्य समय से उदय होता हैं चन्द्रमा अपने समय पर उदय होता हैं, वायु अपने वेग में समय पर गतिवान होती हैं, मानो देखो, अग्नि अपने मे तेजोमयी बनती हैं, और पृथ्वी के परमाणु गुरूत्व अपने में अपनेपन को ले करके प्रतिभाषित होने लगते हैं, परन्तु परमाणु जो प्राणसता का केन्द्र बने हुए हैं, प्राण की विशिष्ठता में लगे हुए हैं, तो मानो देखो, वह जो प्रभु की आज्ञा, प्रभु का जो नियम हैं, प्रभु का एक मानो जो नृत्त हो रहा है, उस नृत्त में हम भी अपने को नृतिका में प्रवेश कराएं। जिससे हमारा नृत्त होने लगे, और हम प्रभु के आनन्दमयी पगडण्डी को ग्रहण कर सकें। तो मेरे प्यारे! हे यज्ञमान! तेरे जीवन को प्रतिभा हैं, वह मानो देखो, एक आनन्दित होनी चाहिए, जिससे देखो, यज्ञमान कहते हैं, जो अपने आत्म तत्त्व के ऊपर अधिपथ्य करने वाला हैं, इन्द्रियों के ऊपर जो संयमित होता हैं, वही तो यज्ञमान है।

शब्द का महत्व

बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! राजा जनक की पत्नी का नाम देखो, रम्भेश्वरी कहलाता था, रम्भेश्वरी ने बारह-बारह वर्षों के तीन अनुष्ठान मानो देखो, मौन हो करके किये, और यह यज्ञमान बन करके यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, अपने को वाणी के लिए तपायमान करना हैं, कि मेरी वाणी इतनी ऊर्ध्वा में हो जाएं, जिससे मैं स्वर्णमयी बन जाऊं बेटा! देखो, यज्ञमान पत्नी कहती है, रम्भेश्वरी का यह कथन था देखो, एक समय उनके द्वारा महर्षि अर्द्धभाग जी विद्यमान हो गये, और अर्द्धभाग से कहती है कि-प्रभु! मैं अपने को ऋषिवर ऐसा बनाना चाहती हूँ कि मेरा एक-एक शब्द देवताओं की सभा में सुशोभनीय हो जाएं, मानो देखो, यह उनका वाक् रहता, तो शब्द का इतना ऊर्ध्वा में महत्व माना गया हैं, क्या वह देखो, मुनिवरों! उनका एक-एक शब्द देवताओं की सभा में एक माला में एक माला बन गई। शब्दों की जो द्यौ लोक को प्राप्त हो और मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने योगेश्वर बनने की कामना की तो वह माला उसी के कण्ठ में समाहित हो गई, और कण्ठ में समाहित हो करके मेरे पुत्रों! वह अपने में आनन्द मा अनुभव करने लगे, तो वह शब्द अपनी आभा में बेटा! यही शब्द अग्नि की तरंगों पर विद्यमान हो करके द्यौ लोक मे जाता हैं। यही शब्द द्यौ लोक में बेटा! देखो, चित्रों के सहित रहता हैं।

याग के सत्रह होताओं से सूक्ष्म शरीर का बोध

तो बेटा! मैंने आज तुम्हें विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ यह तो विज्ञान का एक तथ्य हैं, विज्ञान की प्रतिभा कहलाई जाती हैं। आज बेटा! मैं इस विज्ञान के रहस्यों में न जाता हुआ, केवल विचार क्या कि आज बेटा! मैं तुम्हें वर्णन करा रहा था, कि हमारे यहाँ सत्रह तत्त्वों का यह मानो सत्रह होताओं से यज्ञमान एक याग करता हैं सत्रह होताओं के द्वारा देखो, मुनिवरों! यज्ञमान अपने सूक्ष्म शरीर को जानना चाहता हैं, और जान करके बेटा! ऊर्ध्वा में गमन करना चाहता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, मैं इस सन्दर्भ में, विशेषता में नही ले जा रहा हूँ पुत्रों! विचार केवल यह कि आज का विचार हमारा यह कह रहा हैं कि हम परमपिता परमात्मा की जो महती हैं, अथवा अनन्तता है उसके ऊपर विचार-विनिमय करें।

मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! एक गाथा का वर्णन किया था वह गाथा बड़ी प्रिय लगा करती हैं मेरे प्यारे! देखो, वह गाथा अपने में बड़ी विचित्र मनु वंश में नाना राजा हुए है उनके यहाँ बेटा! सब ब्रह्मवेत्ता रहे हैं और ब्रह्मवेत्ता बन करके क्योंकि राष्ट्र का पालन जो किया जाता हैं राष्ट्रवादी जो प्राणी बनता हैं वह ब्रह्मवेत्ता बनता है क्योंकि जब तक राजा अपनी इन्द्रियों पर संयम नही कर पाता तब तक मुनिवरों! देखो, राष्ट्र को ऊँचा नही बना सकता जब तक राष्ट्र में विवेक की उत्पति न हो जाएं विवेक न हो जाएं तो वह प्रजा का मेध का यज्ञमान नही

बन सकता तो मेरे प्यारे! देखो, मेध प्रजा को कहते हैं यज्ञमान राजा को कहते हैं वह मेध का स्वामीतव कैसे करेगा जब तक उसकी इन्द्रियों में संयम नही होगा और जब इन्द्रियों में संयम हो जाता है उसकी स्मरण शक्ति महान बन जाती हैं स्मरण शक्ति के साथ ब्रह्मज्ञान होता हैं ब्रह्मज्ञान के साथ मुनिवरों! देखो, प्रभु की महती को जानता है जो प्रभु को अपने को (यहाँ से शब्द ध्वनि के रूप में विद्यमान नही हैं अतः यह सूक्ष्म भाग पुस्तक से लिया गया हैं) समर्पित करना जानता हैं वही तो मेरे पुत्रों! देखो, प्रजा का पालक कहलाता हैं वही प्रजा का पालक है जैसे परमपिता परमात्मा संसार का नियमन कर रहा हैं संसार में निरक्त हो रहा हैं इसी प्रकार जो स्वामी बनना चाहता हैं चाहे वह योगेश्वर बनना चाहता हो चाहे वह राजा बनना चाहता हो, चाहे वह यज्ञमान बनना चाहता हो, चाहे वह माता बनना चाहता हो चाहे वह पितर बनना चाहता हो, चाहे वह आचार्य बनना चाहता हो चाहे मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मवेत्ता बनना चाहता हो चाहे मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मवेत्ता बनना चाहता हो जब तक उसे ब्रह्म की पिपासा नही होगी तब तक अपने कार्य में महान नही बन सकता। माता कहती है यह मेरा पुत्र हैं मेरे ही हृदय मेरे आत्मज्ञान से इसको सिंचन हुआ हैं वह माता कहलाती मेरे प्यारे! पितर कौन कहलाता है पितर वह कहलाता हैं जो जानता है कि मेरे सुसज्जित विचारों से मेरा पुत्र पनपा है मेरे गृह में मानो देखो, मैं पितर हूँ यह मेरा पुत्र है पुत्र कौन कहलाता हैं? जो पिता के मानो दायित्व को जान करके, उसके पद-चिन्हों पर गमन करता है। वही मेरे पुत्रों! पितर का पुत्र कहलाया जाता हैं। विचार विनिमय क्या बेटा! आचार्य कौन कहलाता हैं? जो आचारों से पवित्र होता हैं जो मानो विचारों से महान होता हैं (यहाँ के उपरान्त शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध होने से शब्द ध्वनि से लिया गया है।) और ब्रह्म में उसकी प्रवृत्ति पिरोयी हुई होती हैं मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी को वह अपना उदगार देता हैं, अपना विचार देता हैं उसका अन्तरात्मा से बेटा! आचार्य उसका नियमन करता हैं, नम्रता है और उसके मानो चरणों की वन्दना करता है, और उसके मानो जिह्वा जो उसमें निहित है, उसका गमन करता है, उसको पान करके अपने को धन्य स्वीकार कर लेता हैं।

रावण सभा में अंगद

तो मेरे पुत्रों! देखो, अपने में महानता का दर्शन करना उज्ज्वलता की प्रतिभा में रत्त रहना यह मानवीय महान एक विचारधारा कहलाती हैं जिसको हमें जान करके इस सागर से पार होना हैं, मेरे पुत्रों! देखो, इस सम्बन्ध मे एक वार्त्ता मुझे स्मरण आ गई, त्रेता के काल में जो सभा थी रावण की सभा में, महाराजा अंगद अपने आसन को और देखो, अपने पन में जाना चाहते थे, राम की सेना मे आना चाहते थे, तो मध्य में उनके सुहावु आचार्य ऋषि के दर्शन हो गये, जब दर्शन हो गएं तो मानो देखो, उन्होंने ऋषि के चरणों की वन्दना की, और अश्रुपात होने लगे, सुहावु ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम इस प्रकार व्याकुल क्यों हो रहे हो उन्होंने कहा-प्रभु! मेरा अन्तर्हृदय है मानो देखो, आपके सजातीय विचारों से मेरा हृदय इतना सजातीय बन गया हैं क्या मानो देखो, मैं राज सभा में भी सजातीय बन गया हूँ मानो देखो, रावण की सभा में मैं सजातीय बन गया यह आपके चरणों की मानो देखो, वन्दना का फल है। यही मानो देखो, आपके देखो, मैंने उदगार श्रवण किए हैं, आपने जो क्रियात्मक आपने मुझे जो विद्या को प्रदान किया है, उस विद्या का फल मुझे जो प्राप्त हुआ हैं आज मैं मानो देखो, भरी सभा में, राजा रावण की सभा को मैंने मानो देखो, एक अन्धकार में दृष्टिपात कर रहा था। तो मेरे पुत्रों! देखो, यह पितर जनों की महिमा होती हैं, यह पितरजन कहलाते हैं, आचार्य भी पितर है, पितर भी पितर है, परमात्मा भी पितर हैं, सूर्य भी पितर कहलाता हैं। बेटा! बड़ी ही विचित्र विवेचना है पितरों की, आज मैं विशेषता में जाना नही चाहता हूँ परन्तु पितरों की बड़ी विचित्रता हैं और पुत्रों! की भी बड़ी विचित्रता है आचार्य के कुल में ब्रह्मचारी अध्ययन करता है, वह भी पुत्र हैं माता की लोरियों का पान करने वाला भी माता का पुत्र हैं, पिता की आज्ञा का

पालन करने वाला भी पुत्र कहलाता है मेरे प्यारे! देखो, सूर्य की ऊर्ज्वा को जो योगेश्वर अपने को ऊर्ज्वा को अपने को जो ग्रहण कर रहा है वह सूर्य पुत्र कहला रहा हैं चन्द्रमा के लोक अमृत को ग्रहण कर रहा है। मुनिवरों! देखो, अमृत को पान करके और इस संसार रूपी विज्ञान को जानता है बेटा! देखो, विचार तो बहुत ही स्मरण आते रहते हैं।

औषध का प्रभाव

मुनिवरों! देखो, मैं कहाँ तक वर्णन करूं, विचार केवल एक ही मुझे स्मरण आ गया है मुनिवरों! देखो, मुझे वह काल स्मरण है जिस काल में बेटा! देखो, महात्मा दधीचि अपने आँगन में विद्यमान थे, और महर्षि दधीचि के समीप एक श्वेतकेतु मुनि के दर्शन हुए, तो श्वेतकेतु सौ वर्ष हो गएं थे औषध विज्ञान के ऊपर अनुसंधान करते-करते, मेरे प्यारे! जब एक सौ एक वर्ष हो गएं तो वह महात्मा दधीचि के द्वार पर पंहुचे तो महात्मा दधीचि से बोले कि-प्रभु! मैं औषध विज्ञान के ऊपर अध्ययन कर रहा हूँ, परन्तु मेरा एक क्रियात्मक क्रियाकलाप चल रहा हैं क्या मैं सूर्य को अपनी नाभि का केन्द्र बनाना चाहता हूँ, मानो देखो, जो सूर्य जो धाराएं दे करके चन्द्रमा में अमृत को पान करना चाहता है, मैं उस अमृत को अपने में ग्रहण करना चाहता हूँ। तो मानो देखो, जब तक मैं अमृत को नही जानूंगा तो मैं उस विज्ञान में सफलता को प्राप्त नही हो सकूंगा। तो मेरे प्यारे! देखो, एक सौ एक वर्ष के पश्चात ऋषि ने इतना जाना क्या देखो, जिन औषधियों में चन्द्रमा की किरणें प्रधान होती थी, उन किरणों को जानना उनकी लुगदी बनाना और अग्नि में तपाना और वह जीवन देखो, प्रदान मानव का जो प्राण जो प्राणी प्राणान्त हो रहा है उसे प्रदान करके उसमें प्राण सत्ता देखो, पुनः से परिणत हो जाती हैं मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार के औषध विज्ञान भी ऐसी पितरों से प्राप्त होती रहती हैं।

तो आज मैं बेटा! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में क्या औषध विज्ञान में तो जाना नही चाहता हूँ बेटा! यह तो विचारों का बड़ा विशिष्ठ वन कहलाता हैं आओ, मेरे प्यारे! देखो, विचार यह चल रहा था क्या मुनिवरों! देखो, हम प्राण सत्ता को जानें यह प्राण सत्ता बड़ी विचित्र है यह पितरों की सदैव आचार्यों से हमें प्राप्त होती हैं इसी के द्वारा हम अपने में विज्ञान को विज्ञानवेत्ता बन करके और विज्ञान में प्रवेश करके बेटा! हम पराकाष्ठा पर चले जाते हैं।

परमात्मा का हृदय

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार क्या यज्ञमान देखो, आचार्य कहता हैं आचार्य याज्ञवल्क्य मुनि कहता हैं हे ब्रह्मचारियों! यज्ञमान सत्रह होताओं से याग करने वाला बनें। देखो, सत्रह होता क्या हैं? देखो, एक-एक प्राण को जानना ही प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, देवदत, धनंजय, कुरु और कृकल ये दस प्राण कहलाते हैं। मानो देखो, यह तो गुरूतव और तरलतव और तेजोमयी गतिवान और गतिवृत्ति कहलाती हैं। मानो देखो, यह दस वासना कहलाती हैं यह पांच वासना है दस प्राण हैं और मन और बुद्धि बेटा! बुद्धि के बड़े-बड़े प्रकार है बेटा! देखो, एक ही बुद्धि है उसी का नाम बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञावी कहलाता हैं, तो बेटा! देखो, मन के बड़े विशिष्ठ भेद माने गएं हैं, वही मन है बेटा! देखो, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के चित्रों को चित्रण कर रहा हैं, देखो, मन चित्र बन रहा हैं और देखो, यह प्राण चित्र बन रहा है, और मन चित्रों का दर्शन कर रहा हैं बेटा! कहीं स्वप्न में है तो कहीं सुषुप्ति में हैं, कहीं मानो जागरूक मे जागरूक के बड़े अवान्तर भेदन माने गएं हैं, तो समय मिलेगा तो बेटा! चर्चाएं करेंगें इस सम्बन्ध में आज का विचार यह है, क्या हम बेटा! देखो, इस सूक्ष्म शरीर को जानते हुए मुनिवरों! देखो, आत्मा के मौलिक गुण में चले जाएं ज्ञान और प्रयत्न में और ज्ञान और प्रयत्न को जान करके, अपने आत्मवत बन जाएं। हम आत्मवत बन करके बेटा! देखो, आनन्द की जो पगडण्डी हैं, वह आनन्दमयी हैं, उसे

हमे ग्रहण करके बेटा! हृदय से हृदय मे समावेश करना हैं, परमात्मा का हृदय यह सर्वत्र जगत हैं, मानव का हृदय का हृदय का समन्वय ज्ञानं ब्रह्मे आत्मा के मौलिक गुणों में रत्त हो जाता हैं, और वह आत्मा का मौलिक गुण परमात्मा के हृदय से अगम्य बन जाता है। तो बेटा! वहाँ उसे परमानन्द की प्राप्ति हो जाती हैं, तो यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए परमात्मा मानो इस संसार रूपी यज्ञशाला में मानो निहित रहता हैं, याग में मानो देखो, यज्ञं ब्रह्मा यागां रूद्रा मेरे पुत्रों! देखो, यह याग उसका आयतन हैं, उसका गृह हैं, उसका सदन हैं, वह उसी में ओत-प्रोत रहने वाला है। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह क्या मानव को अपने में आत्मवत बन जाना चाहिए, यह आज का वाक् समाप्त। कल समय मिलेगा तो इससे आगे की चर्चाएं ग्यारह होताओं की चर्चा कल प्रगट करेंगें। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन।

५ मौलिक-कर्मकाण्ड १६ ०३ १९८८

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमात्मा श्री हैं, वे मान्य कहलाते हैं। मानो जब वे मान्य हैं, और श्री हैं तो यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, यह उसी के गर्भस्थल में ओत-प्रोत रहता है और उसी में ये नृत्य कर रहा है। जिस प्रकार माता का पुत्र है, माता के गर्भस्थल में ब्रह्माण्ड की विचित्र, एक रचना हो रही है, मानो उसकी रचना के उन्मूलन में, मेरे पुत्रो! मानव बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाता है और विचारता रहता है, यह कैसा अनूठा ब्रह्माण्ड है।

अणु-परमाणु में ब्रह्मण्ड

बेटा! ऋषि का मन्त्र कहता है, वेदमन्त्र कहता है ब्रह्माण्ड माता के गर्भ में ही नहीं, जितने परमाणु हैं, जितने अणु हैं, एक-एक अणु और परमाणु में ब्रह्माण्ड ही निहित दृष्टिपात आता है। हम नहीं कहते, वेद का मन्त्र कहता है, ब्रह्माण्डलं ब्रहे परमाणु ब्रह्मं कृतं विश्वां ब्रह्मे वृत्तः, मेरे पुत्रो। एक-एक परमाणु में ब्रह्माण्ड है, एक-एक अणु में ब्रह्माण्ड है, एक-एक चित्र में ब्रह्माण्ड है, और जब मानव का शब्द जाता है, तो यह भी एक ब्रह्माण्ड में ही ओतप्रोत हो जाता है, यह भी एक ब्रह्माण्ड कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! हमारे यहाँ, बड़ी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके ऋषि-मुनि, प्रायः अपने में चिन्तन में लगे रहे और विचारते रहते थे। ऋषि-मुनि ही नहीं, पति-पत्नी जब गृह में प्रवेश होते हैं, तो वे भी अपने अनुपम ब्रह्माण्ड की विवेचना करने लगते हैं और ब्रह्माण्ड अपने में, अपने को ब्रह्माण्ड में दर्शाते रहते हैं, और विचार-विनिमय करके बड़ी गम्भीरता में रत्त रहे हैं। इसी प्रकार आज का हमारा वेद का मन्त्र प्रारम्भ का कहता है, यजनं ब्रह्मः वृत्तम् ।

आज मुझे कहीं से ये प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि याग के सम्बन्ध में अपना कुछ विचार-विनिमय किया जाएं। मानव को याज्ञिक बनना है, और यह यज्ञमयी स्वरूप है और यह याग में ही ओत-प्रोत रहता है। तो ऐसा वेद का मन्त्र कहता है। तो मेरे प्यारे! हम या में परिणत हो जाएं, याग में अपनी आभा को ले जाएं और उसमें, मानो देखो, अपने को रत्त कर दें, समर्पित कर दें, अपने को अपने में ही दृष्टिपात करने लगें।

याग-चयन-प्रेरणा

तो मेरे प्यारे! यह कैसा अनूठा याग है! हमारे यहाँ, बहुत समय हुआ, जब बेटा! ऋषि-मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके याग का चयन करते रहे हैं, याग में परिणत रहे हैं। यागां रूद्रः भगं ब्रह्मण लोकाम् मानो यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक याग में निहित रहता है।

मेरे प्यारे! विचार क्या? आज, बेटा! मुझे एक याग की वार्त्ताएं, याग मुझे स्मरण आ रहे हैं। मेरे प्यारे! कहीं से मुझे प्रेरणा प्राप्त हो रही है, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक मानव एक प्रेरणा का स्रोत बना रहा है और प्रेरणा को एक-दूसरे से पान करता हुआ, एक-दूसरे से निर्माण, एक-दूसरे की प्रतिभा से ही प्रतिभाषित होता रहा है। आओ, मेरे प्यारे! हमारे यहाँ, सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके ऋषि-मुनियों ने जो अपना एक कर्मकाण्ड को मानो निहित किया है, उसके गर्भ में एक याग है, मानो वही उसका मौलिक कर्मकाण्ड कहलाता है। जिस कर्मकाण्ड के लिए ऋषि-मुनियों ने तपस्याएं की हैं और तपस्या करके मानव उन तपश्चारों में रत्त रहा है।

यज्ञमान के लिए आदेश

यज्ञमान जब यज्ञशाला में विद्यमान होता है, तो पुरोहितजन मानो उद्गाता वेदमन्त्र का उद्घोष करता है और यह कहता है- हे यज्ञमान! आइये, अपनी यज्ञशाला में पधारिए। अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अपने याग को प्रारम्भ कीजिए। मेरे पुत्रो! जिस प्रकार मानो परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया और आत्मा के लिए यह आदेश दिया गया कि - हे आत्मतव! तू अपने प्रभु के इस ब्रह्माण्ड में जो तेरे लिए यह रचा गया है, जिसमें ज्ञान और विज्ञान और इस ब्रह्माण्ड के अर्न्तगर्भ में और बाह्य-गर्भ में प्रवेश हो करके तू उसको जानने का प्रयास कर। मेरे प्यारे! इसीलिए मानव वैज्ञानिक बनते हैं, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, बेटा! बन जाते हैं, अपने में ऊँची - ऊँची उड़ाने उड़ने वाले बन जाते हैं।

अग्न्याधान

मेरे पुत्रो! देखो, यागां सृष्ट प्रह्वा, इसी प्रकार, मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में जब यज्ञमान विद्यमान होता है तो वह मानो देखो, अपने पूर्वजों, अपने पितर-जनों, जो ब्रह्मा इत्यादि हैं, वे यज्ञमान के पितर कहलाते हैं, उन पितरों का मानो देखो, वह यथोचित स्वागत करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो, वह यज्ञशाला के समीप जाता है। और अग्नि का ध्यान करता हुआ कहता है- हे अग्नि! मानो देखो, तेरे में अग्नि है और यज्ञशाला में अग्नि है और यह अग्नि काष्ठ में है, यही अग्नि सूर्य में है, यही अग्नि मानो देखो, वेदमन्त्रों के उद्गीत गाने वाला जो उद्गाता है, उसके हृदय में यह अग्नि प्रचण्ड हो रही है, ब्रह्म जो उद्गार देता है और गम्भीर मुद्रा में मौन रह करके, वह भी अग्नि को प्रचण्ड कर रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, तीन प्रकार के रूपों को ले करके वह ज्ञान कर्म और उपासना को ले करके, मेरे प्यारे! देखो, ज्ञान को, कर्म को उसमें समर्पित करके मानो वह उपासना कर रहा है। और उपासना करता है, कहता है- हे अग्नि-देव! तू अग्नि अग्रं ब्रह्मः, तू अग्नि कहलाता है, मानो देखो, तू काष्ठों में रहता है, कहीं सूर्य की ऊर्ज्वा में, ऊर्ज्वा बन करके किरणों मे रहता है, कहीं मानो अमृत बन करके तू चन्द्रमा की कान्तियों में रहता है। हे अग्ने! तू विचार-विनिमय, देखो, माता के गर्भस्थल में जो शिशु, हम जैसे शिशु पनप रहे है, तू मानो वहाँ भी अग्नि है, तू अखण्ड बन करके वहाँ भी अखण्ड-ज्योति बन करके तू संसार को ज्योतिवान् बना रहा है। तू कैसा ज्योतिर्मयी लिंग है, मानो जिसके ऊपर मानव बहुत परम्परागतों से अनुसन्धान कर रहा है, विचार-विनिमय कर रहा है, और मृत्यु से पार होने के लिए तत्पर हो रहा है।

यश विमर्श

मेरे प्यारे! देखो, इस अग्नि के लिए जब यज्ञमान इस प्रकार की प्रार्थना करता हुआ, अग्न्याधान करता हुआ, तीन प्रकार के ज्ञान-कर्म-उपासना के रूप में, बेटा! तीन समिधाओं को मानो देखो, जैसे हमारे हृदय में ज्ञान और प्रयत्न, मेरे पुत्रो! जैसे हमारे में, अप्रतिम् देखा, रजोगुण-सतोगुण-तमोगुण, ये तीन मानो देखो, समिधा के रूप में, देखो, यह अग्नि, देखो, ज्ञान रूपी, यह मन ज्ञान रूपी अग्नि में, तीनों भस्म हो करके और साधक परमात्मा के समीप जाने के लिए तत्पर होता है। इसी प्रकार, यज्ञं ब्रह्मं, तीन, मानो देखो, रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण की प्रतिभा आती है। इससे ऊर्ध्वा होने के पश्चात् परमात्मा के समीप देखो, साधक बनता है।

मेरे पुत्रो! देखो, वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि धर्मब्रह्मे कृतं देवः, मेरे प्यारे! देखो, उसके पश्चात् अग्न्याधान करके कहता है - हे अग्नि! तू मानो देखो, ईंधन को जैसे मेखला के रूप में वृत्त करने वाली है, मैं तेरा, सर्वत्र देवताओं का पूजन करना चाहता हूँ।

बेटा! अग्नि की पूजा हो रही है, वह उसके पश्चात् आपोमयी जल की पूजा हो रही है, वह मेखला में, जल का सिंचन कर रहा है। और वह कहता है- जल! तू ही सरस्वती का मानो प्रमाण है, तू ही सरस्वती के रूप में विद्यमान है। तू ही अन्नाद के रूप में विद्यमान है। तू ही अदिति के रूप में विद्यमान है। यही अदिति की किरणों के साथ में आपोमयी नहीं होगा तो यह जगत् नही रहेगा। मानो यदि वह यह सोम अमृतं ब्रह्मः, यह अन्नाद नहीं रहेगा। तो प्राणी नही रहेगा मेरे प्यारे! यदि सरस्वती नहीं रहेगी, तो ज्ञान-कर्म-उपासना समाप्त हो जाएगी।

तो परिणाम यह, मुनिवरों! यह सर्वत्र जैसे माता के गर्भस्थल में, जब परमात्मा ने मेखला का निर्माण किया, तो मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम अन्नाद, उसके पश्चात् मुनिवरों! सरस्वती, उसके पश्चात् मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणं ब्रह्म कृतं लोकाम् अदिति, अदिति प्रथम में आ जाता है। मेरे प्यारे! देखो, वह मेखला बन करके रहती है, इसीलिऐ मेरे पुत्रो! जब माता के गर्भस्थल में, हम जैसे शिशु पनपते हैं तो देखो, आपोमयी जल उस बाल्य का, शिशु का ओढ़न और आसन्, मेरे प्यारे! पासे, सर्वत्र मानो देखो, इस आपोमयी में ढ़का हुआ सा प्रतीत होता है। मेरा प्यारा प्रभु वह कितना विज्ञानवेत्ता है! आज कोई मानव विज्ञान की कल्पना करता रहता है, परन्तु परमात्मा का विज्ञान इतना अनन्तमयी है, जिसको मेरी प्यारी माता, जो वेद के मर्म और प्राण को जानने वाली है, वह अपने शिशु को जानती है कि कैसे मेरे में निर्माण हो रहा है।

मेखला में पिण्ड-ब्रह्माण्ड

मेरे पुत्रो! मैं विशेष चर्चा न करता हुआ, यह तो बेटा! विचारों का विशाल एक वन है, परन्तु विचार केवल यह है कि माता प्रह्रा, इसीलिए तीन स्थलियों पर यज्ञमान जल को सिंचन करता है, मेखला में। जैसे पृथ्वी के आंगन में, बेटा! समुद्र होता है, पृथ्वी है, पृथ्वी में ही समुद्र है, और वह समुद्र ब्रह्मे वह मेखला का क्रियाकलाप कर रहा है, तो ब्रह्माण्ड और पिण्ड की कल्पना याग से, मुनिवरों! देखो, कटिबद्ध कर दिया है। वेद के आचार्यो ने, बेटा! जब इस प्रकार अमृतं ब्रह्मे जल का देखो, जल का जब पूजन कर लेता है, जल का जब सिंचन करता है, पूजन करता है। पूजन का अभिप्रायः यह है कि उसका सदुपयोग करने का नाम पूजा कहलाता है। मेरे पुत्रो! वह कृति बन जाता है।

श्रद्धामयी स्वाहा-आहुति

उसके पश्चात् देखो, वह श्रद्धामयी, अपनी श्रद्धामयी घृत की आहुति दे करके और स्वाहा कहता हैं। और वह अदिति में अपने शब्द को पहुंचाता है, वह आदित्य द्यौ में प्रवेश करा देता है। मेरे पुत्रो! देखो, द्यौ-मण्डल ये सर्वत्र एक पवित्रता की छाया में छायित हो जाते हैं और वह, मुनिवरों! इसी में रत्त हो करके, मुनिवरों! अपने में उक्त क्रिया में रत्त हो जाते हैं।

स्वाहा में भद्रीकरण

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, हे यज्ञमान! तू होता के द्वारा चल। मानो देखो, होता जितने भी हैं, वे सर्वत्र यज्ञमान की वाणी को पवित्र करते हैं। मेरे प्यारे! देखो, स्वाहाः का अर्थ है - स्वाहा घृत ब्रह्मे, मानो देखो, हम अपने जीवन में, जितना भी हमारा क्रियाकलाप है, मन-कर्म-वचन के द्वारा, हम सर्वत्र दूरिता को स्वाहा कर रहें हैं। क्योंकि दूरिता को स्वाहा इसलिए कि हमारे में दूरिता न रहें। ये परमात्मा की बनाई बड़ी एक भव्यशाला है और बाह्य जगत् में हम देखो, यज्ञशाला में, अपने आन्तरिक जो दूरिता है, उन्हें सबको स्वाहा कह करके, उन्हें त्यागना चाहते हैं। मेरे प्यारे! यह स्वाहा का अर्थ है कि अपने में ग्रहण करना चाहते हैं। देखो, पवित्रता को ग्रहण करना, अशुद्धवाद को त्यागना, मेरे प्यारे! यह स्वाहा का अर्थ कहलाता है।

वाणी-शोधन और द्यौगम्यता

विचार आता है, बेटा! देखो, स्वाहा अपने में, हमारे ऋषि-मुनियों में तो बड़ा इसके ऊपर देखो, वाद-विवाद बना रहा हैं। मानो देखो, स्वाहा के ऊपर एक-एक ऋषि छः-छः माह तक चिन्तन करता रहता है। यह चर्चा तो, बेटा! किसी काल में प्रकट करूंगा। आज का विषय तो यह नहीं कह रहा है, परन्तु विचार केवल यह कि हम यज्ञं ब्रह्मः वह यज्ञमान देखो, होताओं के द्वारा, जिस ऋत्विजों के द्वारा, आब्रहे अप्रतिं ब्रह्मः शोधनं ब्रह्वे, मेरी वाणी पवित्र हो जाएं और वाणी से वाणी का पवित्र हो जाना ही यज्ञशाला का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाना है। वह रथ ब्रह्मे वृत्तम्, मानो देखो, यज्ञशाला एक रथ के तुल्य कहलाती है, एक रथ है, जैसे नाना प्रकार की किरणों, सूर्य भी उसी रथ में विद्यमान है, और वह सूर्य का चक्र चल रहा है, नाना प्रकार की किरणों और रश्मियाँ उसमें विद्यमान है, परन्तु देखो, वह क्या-क्या क्रियाकलाप करती हैं, यह तो मैं, विज्ञान, सूर्य-विज्ञान आयेगा, मैं इसके ऊपर चर्चा किसी काल में करूंगा। परन्तु विचार केवल यह कि यह एक रथ कहलाता है। सूर्य भी एक रथ है, जहाँ नाना प्रकार का जगत! रश्मि और किरणों के द्वारा विद्यमान रहता है।

याग के ऋत्विज

मेरे प्यारे! देखो, विचार क्या? आज मैं बेटा! देखो, विज्ञान और देखो, यज्ञ सर्वत्र विज्ञान है, विज्ञान की एक अनूठी देन है, जो कर्मकाण्ड की पद्धतियों में, बेटा! निहित रहती है, जो मानो देखो, वह ब्रह्मा, उद्गाता, अध्वर्यु के रूप में मानो पुरोहितों के रूप में विद्यमान रहती है। अध्वर्यु कहते है, जो अहिंसक हो, हिंसा जिसके निकट न हो। उद्गाता, उसे कहते हैं, जो वेदों का उद्गीत गाने वाला हो। साम-गान, मानो गान गाने वाला हो। मानो जैसे जटा पाठ, माला पाठ, विसर्ग पाठ, उदात्त और अनुदात्त में वेदों का गान गाने वाला हो, वह उद्गाता कहलाता है। मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मा वह कहलाता है, जो उसका अधिपति है। वह अधिपथ्य हैं उसके संरक्षण में, मानो किसी प्रकार की त्रुटि यदि होती है, जो यज्ञमान को दोषारोपण की वृत्तियाँ मानो उसके हृदय में ग्रह्यी हो जाती हैं, तो बेटा! विचार आता है कि देखो, वृत्तं पुरोहितः, पुरोहित उसे कहते हैं, जो यज्ञमान के लिए सदैव देखो, पराविद्या के ऊपर अनुसन्धान करके उसमें परिणत कराता है। आओ, मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ, आज मैं कोई विशेषता में नहीं, केवल आज का विचार हमारा यह कि हम परमपिता परमात्मा के सर्वत्र कर्मकाण्ड के ऊपर विचार-विनिमय करें। अब, मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् यशा ग्रहणं मम समः वाचन्नमं गतौ रथं ब्रह्मणः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, अथवा मेरे भद्र ऋषि-मण्डल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी याग और कर्मकाण्ड के सम्बन्ध में बड़ी एक अनूठा चर्चा कर रहे थे, जिन चर्चाओं में आध्यात्मिकवाद और मानसिक क्रियाकलापों का प्रायः वर्णन हो रहा था। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से, सदैव यह परम्परागतों से, प्रार्थना करता रहा हूं कि उनका ज्ञान एक बड़ा अनूठा कहलाता है। उनके ज्ञान में एक दाह, एक वृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं। जैसे परम्परागतों से ही, गुरु-शिष्य प्रणाली के आधार पर, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अपने विचारों को प्रारम्भ करते हैं और उन विचारों में कितनी गम्भीरता है, कितना मानो उसमें एक-एक शब्द में ज्ञान है। जब हम उसके ऊपर विचार-विनिमय करने लगते हैं, तो प्रायः हम यह विचारते रहते हैं कि पूज्यपाद गुरुदेव क्या उद्गीत गा रहे हैं और उस उद्गीत में कितना रहस्यतम है।

आज, यहाँ यह हमारी आकाशवाणी जा रही हैं, जहाँ हमारा यह उद्गार जा रहा है, वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ है और मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यही कहता रहता हूँ कि मेरा अन्तरात्मा तो सदैव यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! तेरे जीवन की प्रतिभा मानवीयतव में सदैव रत्त रहती रहे! ऐसी मेरी सदैव कामना रहती है। मेरा अन्तर्हृदय प्रायःयज्ञमान के साथ होता है।

वाममार्गीय काल

जैसा यह काल चल रहा है, इस काल को मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह उद्गीत रूप में गा गया हूँ कि यह संसार में वाममार्ग का काल है। परन्तु ऐसे वाम-मार्ग के काल में, मेरे यज्ञमान अपने द्रव्य का सदुपयोग कर रहे हैं, यह मानो उसके जन्म-जन्मान्तरों की एक पूँजी है, एक महानता है। मानो आधुनिक काल में तो सुरा और सुन्दरी में मानव लगा हुआ है, द्रव्य की लोलुपता में लगा हुआ है। यह विचार नहीं हो रहा है कि यह संसार कहाँ जाएगा! मैं इस वाक्य में, मानो राजा से ले करके और प्रजा तक मानो सब वाम-मार्ग का एक काल बना हुआ है।

वाममार्गीय कर्मकाण्ड और आहार

वाम-मार्ग उसे कहते हैं, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा करता था कि, किसी काल में, कि यागों में मांस की आहुति देना, अर्थो के अनर्थ कर देना, महाभारत काल के पश्चात् जो यह मानव समाज की धर्म और कर्मकाण्ड की पद्धतियों में, जो पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी प्रकट कर रहे थे, कर्मकाण्ड में जो अशुद्धवाद आया, उस अशुद्धवाद का परिणाम यह हो गया कि वे याग तो रहे नहीं, वह याग तो समात्प हो गएं हैं, परन्तु देखो, मानव का मुखारबिन्दु एक यज्ञशाला के रूप में बन गया है। वह सुरा और सुन्दरी और मांस को भक्षण करता जा रहा है। तो ये यह विचार आ रहा है कि इन्द्रियों की लोलुपता में यह मानव अपनी मानवीयतव का ह्रास कर रहा है।

आज मैं इस विचार को देना नहीं चाहता हूँ। मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया, आधुनिक काल का राष्ट्र मानो अपने पद की लोलुपता में, मानो देखो, अपने में अपनेपन को दृष्टिपात कर रहा है। राष्ट्र का अन्तःकरण कुछ कह रहा है, अन्तरात्मा कुंछ कह रहा है, बाह्य क्रियाकलाप उसका कुछ और ही कुछ क्रियाकलाप कर रहा है। विचार आता हैं कि अन्तरात्मा कहता है कि राष्ट्र में शान्ति हो, राष्ट्र एक महानता वाला बने, वाममार्ग ही न बन जाएं, मानो एक रक्त का, रक्त में पिपासी बनने के लिए जो मानव लगा रहता है। तो मुनिवरों! देखो, हे मेरे पूज्यपाद! वह जो एक-दूसरे रक्त का पिपासी है, वह क्या है? वह महाभारत काल के पश्चात् जो याग का तिरस्कार हुआ कर्मकाण्ड की पद्धति के आधार पर, उसका ही परिणाम यह हुआ है कि आधुनिक जो वर्तमान का काल चल रहा है, यह पूर्ण-रूपेण एक वाममार्ग का काल बन गया है, क्योंकि याग तो रहा नहीं, जो वहाँ अपने को समाप्त कर दें।

आधुनिक राष्ट्र की वेदना

जब मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अपने से यह वर्णन करता हूँ पूज्यपाद! मैं आपको परिचय देने के लिए आया हूँ। आधुनिक काल का देखो, राष्ट्र जब याग में लग जाता है तो वह ऐसे द्रव्य के द्वारा याग कराता है, जिससे देखो, वह कहता है मेरी आयु प्रबल हो जाएं, राष्ट्र कहता है, जो राजा देखो, कर्णाधार बने कि मेरी आयु दीर्घ हो जाएं। अरे भोले, तेरी आयु तो जब ही दीर्घ होगी जब मानो तू महाराजा अश्वपति की भांति, जब तू स्वयं कृषि का उद्गम करके उसके द्वारा तू याग की कल्पना नही, याग को क्रिया में लाने का प्रयास करेगा, तो तेरी आयु दीर्घ बन जाएगी। परन्तु देखो, आज दुराकृतियों के द्रव्य को याग में परिणत करके, अपनी आयु को दीर्घ बनाना चाहता है! यह तेरा दुर्भाग्य है। यहाँ राजा अश्वमेध-याग में, देखो, यहाँ गो-मेध इत्यादियों के द्वारा जब याग में महानता का वर्णन करते रहे, मानो उद्गीत वेद का गाते रहे, तो राष्ट्र पवित्र बना है। जभी राष्ट्र पवित्र बना है। वह जब ही बना है, जब राजा ब्रह्मज्ञानी, कर्मकाण्डी और मानो देखो, अपने में उद्गम करने वाला रहा हो, तो उसी काल में राष्ट्र ऊँचा बना है। राष्ट्र उस काल में ऊँचा नहीं बना है, जब प्रत्येक प्राणी को आनन्दित करना चाहता है, प्रत्येक वाणी

को आनन्दित करने से वह तो आनन्दित होता नहीं, स्वतः भी आनन्द को प्राप्त नहीं कर पाता।

विचार आता रहता है, आज मैं, मानो देखो, प्रत्येक राजा इस आभा में लगा हुआ है, मेरे राष्ट्र में शान्ति हो। परन्तु शान्ति कैसे हो सकती है? आज जब एक प्राणी, स्वार्थपरता पर प्राणी, प्राणी का हनन कर रहा है, विनाश को प्राप्त करा रहा है, मेरी पुत्रियों के चरित्र को हनन करके, उनको मृत्युदंड दे रहा है। अरे, राजन्! ऐसे राजा को राष्ट्र को त्याग करके पर्वतों की गुफा में चला जाना चाहिए। क्योंकि ऐसी ही, अपकृत कार्य होते हैं, तो मानो देखो, वह राष्ट्र के ऊपर शाप और भार होता है। देखो, यह महाराजा अश्वपति ने अपने वाक्यों में पुरातन काल में वर्णन करते हुए कहा था। भगवान राम की जिसकी गाथा शुद्ध-अशुद्धता में वर्णन की जा रही है, इसका तो मुझ कोई कृत नहीं करना, परन्तु उनके जो नामोकरण की, उनकी घोषणा है वह बड़ी विचित्र है, उस घोषणा को न स्वीकार करते हुए केवल एक नृत्य रह गया है। यह नृत्य ही बन करके रह जाएगा, यह संसार क्या?

यह प्रभु से प्रार्थना करता रहता हूँ, पूज्यपाद गुरुदेव से करता रहता हूँ, कि पूज्यपाद! क्या यह राष्ट्र और समाज एक खिलवाड़ बन कर रह जाएगा? मेरे विचार में नहीं आ रहा है, जब मैं किसी भी क्षेत्र में अवरोहण करने लगता हूँ, शिक्षा प्रणाली में, राष्ट्रीय वातावरण में, वही देखो, मुझे ऐसा अन्धकार दृष्टिपात आता है मुझे प्रकाश का एक अंकुर भी प्राप्त नहीं हो रहा है। मैं यह विचारता रहता हूँ, प्रभु! क्या यह रक्तभरी क्रांति ही चलती रहेगी? मेरी पुत्रियों के श्रृंगारों को हनन ही किया जाता रहेगा? यह संसार कैसा बन गया है, भगवन!?

तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय देना चाहता हूँ। परिचय देने में तो मैं कोई मानो देखो, किसी प्रकार की अनुमत्तियाँ नही कर पाऊंगा। केवल यही कि परिचय यह है कि राष्ट्रवाद का अपने राष्ट्र को उन्नत नहीं बनाना......क्योंकि वाम-मार्ग जब मानव की मस्तिष्क और बुद्धि पर छा जाता है, वाम-मार्ग देखो, सुरा-सुन्दरियों का पान करने लगता है, उसे संसार का, एक-दूसरे का भान नहीं रहता-एक-दूसरा क्या कर रहा है?

विष्णु राष्ट्र

परन्तु हे राजन! देखो, यदि अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए तत्पर है, तो महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने एक वाक्य बहुत प्रियता में कहा था, महात्मा वशिष्ठ ने राम से कहा था- हे राम! तुम्हारे राष्ट्र में, देखो, महाराज दिलीप का राष्ट्र बड़ा विचित्र त्याग और तपस्या में रहा है। महाराज रघु का राष्ट्र यागमय रहा है। महाराज अज का मध्यकाल आया, यहाँ त्रुटियाँ प्रारम्भ हो गयीं, अयोध्या में त्रुटियाँ प्रारम्भ हुई। तुम्हारे पितर ने भी त्रुटियाँ प्रारम्भ कीं। परन्तु देखो, वह भी सुरा में, देखो, सुन्दरियों में रत्त हो गया। सुरा तो पान उन्होंने किया नहीं, परन्तु देखो, सुन्दरियों में परिणत हो गया। अमृतम्, हे राम! तुम्हें अयोध्या को पुनः से विष्णु-राष्ट्र बनाना हैं विष्णु-राष्ट्र बना करके अपनी संस्कृति का प्रसार करना है। जब विद्यालय में ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहा था, उस काल में महात्मा वशिष्ठ और माता अरून्धती दोनों का ये वाक्य उच्चारण करते रहते थे। राम ने वही किया। राम ने संस्कृति का प्रसार किया। अयोध्या में विष्णु-राष्ट्र की स्थापना की और मानो देखो, यह लगभग हज़ारों वर्षो तक, ऐसा ही देखो, विष्णु-राष्ट्र गतियों में गति करता रहा।

आज का राष्ट्र

विचार आता है, आज का राष्ट्र, मैं कौन-सा राष्ट्र उच्चारण करूँ? आज का राष्ट्र मानो देखो, न विष्णु-राष्ट्र है, न राम-राज्य है। आज का राष्ट्र तो मानो देखो, एक-एक......, अप्रितम्, आज का राष्ट्र तो एक वाम-मार्ग की प्रतिभा में रत्त हो रहा है। देखो, नाना प्रकार के धर्म, धर्म को नहीं विचार रहा है। राष्ट्र कहता है, राजा कहता है कि - हम तो निरपेक्ष कहलाते हैं, हमारा कोई धर्म नहीं, राष्ट्र नहीं, मानो देखो, हम तो केवल निरपेक्ष हैं, सब धर्मों को स्वीकार करते हैं। जब मैं कहता हूँ-अरे, भोले राजन्! तू दर्शनों का अध्ययन नहीं करता, तू वेद का अध्ययन नहीं

करता।

धर्म-विवेचना

अरे, संसार में धर्म तो एकोकी है, वह बहुवचन नहीं कहलाता। वह एक ही धर्म कहलाता है। वह बहु ब्रह्मे वृत्तां ब्रह्मे वह बहुवचन कहलाता है, देखो, नाना धर्म, धर्म नहीं हुआ करते। हे राजन! यदि तू अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहता है, और मेरी पुत्रियों की रक्षा करना चाहता है,? तू इसको मानो विष्णु और राम-राज्य बनाना चाहता है, तो तेरे राष्ट्र में धर्म होना चाहिए। और, धर्म किसे कहते हैं? जो मानव की अन्तरात्मा के अनुकूल जो भी कर्म हैं, उसी का नाम धर्म कहलाता है। मानो देखो, जो प्रत्येक इन्द्रियों में कर्त्तव्यवाद समाहित हो रहा है, उसका नाम धर्म है। धर्म गौ, बहुवृन्दं ब्रह्मे देखो, यह जो धर्म है, यह एक कहलाता है, यह अनेक नहीं कहलाता है। देखो, यहाँ कोई कहता है, राजा कि हम तो देखो, मोहम्मद को भी इसी प्रकार स्वीकार करते हैं, ईसा का भी स्वीकारते हैं, जैन को भी स्वीकार करते हैं, नाना धर्म उच्चारण कर देता है हे भोले राजन! नाना धर्म तो होते ही नहीं। मानव तो नेत्रों से सुदृष्टि ही तो पान करेगा और वही उसका धर्म है, सुसज्जित शब्दों को श्रोत ही तो ग्रहण करेंगे, वही उसका धर्म है।

मानो धर्म की विवेचना, यदि भोले राजा तू नहीं जानता। मुझे राष्ट्र का अधिकार नहीं है। देखो, जो धर्म को नहीं जानता, उसे राष्ट्र का अधिकार नहीं है। और जो राष्ट्र की नींव, प्रणाली बनाता है, वह भी राष्ट्र की प्रणाली को बनाने का अधिकार नहीं होता उसे मानो यह प्रणाली तो तपस्वियों के और जो मानो अन्तरात्मा के अनुसार उन पर अपने जीवन का अधिपथ्य करते हैं, आचार-संहिता का निर्माण करते हुए राष्ट्र की पद्धति का निर्माण करते रहते हैं। परन्तु देखो, जब यहाँ निर्माण होता है, उस समय पांडित्व नहीं होते, मनु सिद्धान्त नहीं हुआ, देखो, यहाँ विष्णु-राष्ट्र की स्थापना नहीं हुई।

विचारा जाता है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यही कहता रहता हूँ, हे राजन! तू अपने में मानो तू अपनी कृतियों में रत्त हो करके चल हे राजन! तेरा यह कर्त्तव्य है कि तू एकोकी धर्म को अपनाने वाला बन। मानो यह कैसे अपनाया जाएगा? मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल से वर्णन कराया और पूज्यपाद गुरुदेव को मैं परिचय क्या, अनादि काल में भी इसी प्रकार अपनाते रहे हैं। राजा रावण के काल में भी जब नाना धर्म हो गये, मानो देखो, अपने को कोई असुर कह रहा है, कोई सुर कह रहा है, कोई और नाना प्रकार की पद्धतियों का निर्माण कर रहा है, उस समय भगवान राम का चक्र गति करने लगा। और, गतिवान का यह कर्त्तव्य होता है कि वह धर्म को ले करके और रूढ़ियों का मानो देखो, त्यागता चला जाएं और एक धर्म और संस्कृति की स्थापना करता हुआ अपनी राष्ट्रीय पद्धति को ऊँचा बनाना चाहिए। यह राष्ट्र का कर्त्तव्य होता है। यह राजा का कर्त्तव्य, मानव-मानव को हनन कराने का नहीं है।

धर्मवाद के ऊपर जो राजा अपने धर्म को नहीं जानता वह रूढ़ि के ऊपर जो मानव का संहार होता है, उसको कदापि नष्ट नहीं कर सकता। वह इसलिए नष्ट नहीं कर सकता क्योंकि उसमें स्वतः में रूढ़िवाद है। वह उनको जानता नहीं कि धर्म क्या है, अधर्म क्या है? वह तो केवल अपने पद की लोलुपता में लगा हुआ है। यह प्राणी, यह मानव कहीं चला जाएं, पुत्रियों का कहीं भी हनन होता रहो, मानव कहीं भी देखो, अग्नि के मुख में चला जाए और धर्म रहे न रहे संसार में। इसके ऊपर वह विचार-विनिमय नहीं कर रहा है। वह केवल अपनी देखो, प्रातःकालीन् मानो देखो, नाना सूक्ष्म-सूक्ष्म देखो, वह जीवों को, आत्मा-धारियों को ले करके, अग्नि में तपा करके उसका रसपान कर लेता है और अपने में वृत्तियों में रत्त रह कर उसका प्रातः राश करता है। विचार आता है-अरे, मानव! जब तू इतना हिंसक है, भगवान मनु सिद्धान्त और उनके विचारों को लीजिए। मनु जी के राष्ट्र में

मछली से ले करके और प्राणी और मानवत्व की रक्षा होती थी, तो वह मनु-वंश का राष्ट्र कहलाता है।

तो विचार आता रहता है कि वेद क्या कहता है? दर्शन क्या कहता है? दर्शन कहता है कि मानव की प्रवृत्ति देखो, विज्ञान के ऊपर निहित रहनी चाहिए। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो जानते हैं। बहुत समय दृष्टिपात किया गया है। जिनके आश्रित हो करके हमने भी बहुत से जगत् को दृष्टिपात किया है, सृष्टि और जगत् को दृष्टिपात किया गया। वह काल जब स्मरण आता है और आधुनिक जगत् को दृष्टिपात करते हैं तो राष्ट्र का एक अंकुर मात्र भी दृष्टिपात नहीं आता। तो विचार...... (शेष प्रवचनांश श्रुतिगम्य नहीं है।) रासना १६-०३-१९८८

६ ग्यारह होता १७-०३-१९८८

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है।, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है और वह चैतन्य देव है, मानो वह सर्वज्ञ है।

सर्वज्ञ-दर्शन

कोई भी स्थली ऐसी नहीं है, जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो। पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं है, समुद्रों की कोई तरंगें ऐसी नहीं है, जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो। वेद का मन्त्र कहता है- वह सर्वज्ञ है, मानो एक-एक परमाणु में निहित रहने वाले हैं। अणु और परमाणु की प्रतिभा में, जड और चैतन्यता को जो निर्माण है, उस निर्माण के सर्वत्र मूल में प्रायः वह दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके मानो अपनी उड़ाने उड़ता रहा है और उड़ान उड़ता हुआ, बड़ी दूरी चला गया है, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में परमात्मा की प्रतिभा को जानने के लिए, मानो बहुत कुछ अनुसन्धान और विचार-विनिमय करता रहा रहता है, परन्तु उसका जो रहस्य है, वह रहस्यं ब्रह्मः वृत्तः । वेद की आख्यिका कहती है कि उस परमपिता परमात्मा का रहस्य रहस्यमय ही बना हुआ है, क्योंकि वह अपने में बड़ा विचित्र और मानवीयतव में रत्त रहने वाला है।

तो आओ, मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना तो तुम्हें देने नही आया हूँ, कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय यह है कि हम, अपने में उस प्रभु का दर्शन, प्रभु की महती को अपने में ही पान करना चाहते हैं। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र एक बड़ी विचित्र उड़ानें उड़ रहा है। और, वह उड़ान, ये वेदमन्त्र कह रहा था, विज्ञानां ब्रह्मे बृत्तं भवितां ब्रह्मः वाचान्प्रमाणां ब्रीहि ब्रही श्वअ्नाः, तो वेद का मन्त्र यह कर रहा है कि वे परमपिता परमात्मा बड़ा अनूठा है और अनुपम है, मानो उसकी अनुपमता, महानता में सदैव रक्त होती रहती है। क्योंकि परमपिता का यह जो अनूठा ज्ञान और विज्ञानमयी जगत् है, मानो यह विज्ञान अपने में बड़ा माधुर्य और यह अनुपमता में सदैव निहित रहने वाला है। तो आओ, मेरे पुत्रो! आज का विचार क्या है? कि संसार एक विज्ञान में ही रत्त रहने वाला है। प्रत्येक मानव विज्ञान में उड़ाने उड़ता रहता है, प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता की आभा में सदैव रत्त हो रहा है।

विचारों के दो प्रकार

आओ, मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ हमारी आध्यात्मिक विज्ञान की एक कड़ी बनी हुई है और उसी में हम अपने को ले जाना चाहते हैं। तो मेरे पुत्रो! हमारा एक नृत्य होता रहता है, गुरु और शिष्यों का, आचार्य-ब्रह्मचारियों का, माता और पुत्र का। मेरे प्यारे! हमारे यहाँ ऐसे महान पुत्र भी हुए हैं, जो माता से प्रश्न करते रहे हैं, परन्तु माता भी निरूत्तर होती रही है और, आचार्य कुल में, विद्यालयों में, प्रायः ब्रह्मचारी और आचार्यजन आध्यात्मिक और भौतिकवाद की प्रायः उड़ाने उड़ते रहे हैं।

तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ, दो ही प्रकार के विवाद माने गएं हैं। परम्परागतों से दो प्रकार के विचार हैं- एक भौतिक और एक वैज्ञानिक। मेरे प्यारे! भौतिक विज्ञान भी हैं, आध्यात्मिक विज्ञान भी। दोनों प्रकार का विज्ञान प्रायः मानवीय मस्तिष्कों में सृष्टि के प्रारम्भ से पनपता रहा है और विचारवेत्ता इसके ऊपर विचार-विनिमय करता रहता है। तो मेरे पुत्रो! मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि इन दोनों प्रकार के विज्ञान में

मानव को रत्त रहना है और दोनों प्रकार के विज्ञान की प्रतिभा में मानव परम्परागतों से, बेटा! रत्त होता रहा है।

याज्ञवल्क्य-आश्रम में याग-चर्चा

आज मैं तुम्हें, बेटा! उस विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और ब्रह्मचारियों का, दोनों का संवाद, दोनों अपने में वेद की आख्यिका के आधार पर अपने विचारो में मग्न रहे हैं और उन विचारों में मग्नता की एक आभा में रत्त होते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्हीं विचारों में ले जाने के लिए हम आए हैं, जिन विचारों में ब्रह्मचारी-आचार्यजन, माता और पुत्र अपने में विचारों की एक मानो झड़िया लगाते रहे हैं।

तो आओ, मेरे पुत्रो! आज का वेद का मन्त्र हमें यही कह रहा है, यशं ब्रह्मः, गुरुवर्चं ब्रह्मे वर्णःस्वाकृति वृद्धं ब्रह्मः, तो मेरे प्यारे! वेद का मन्त्र यह कह रहा है- वेदां ब्रह्मे वेदा-कीर्णास्तुता विश्वां ब्रह्म-यागः तो ऋषि-मुनियों यागों में परिणत होना, प्रायः हमारा कर्त्तव्य है। ब्रह्मचारी कहता है, - से कि- महाराज! यह यज्ञमान याग करना चाहता है, इसके याग में कितने होता होने चाहिए? तो बेटा! सत्रह से, चौबीस से पूर्वा में, पूर्वार्ध में, बेटा! वह ग्यारह होताओं का उपदेश देता है, और वह कहते हैं कि याग में ग्यारह होता होने चाहिए। तो मुनिवरों! देखो, एकादशो, हमारे यहाँ प्रतिपदी-वृत्तियों में रत्त रहा है। तो एकोदशो से हमारी गणना का प्रारम्भ होता है।

ग्यारह होता

मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ, दस इन्द्रियाँ हैं और ग्यारहवाँ मन कहलाता है, मानो संसार में जो भी मानव अपने क्रियाकलाप में परिणत रहना चाहता है, उस मानव को मानो ग्यारह, एकादशो में परिणत हो जाना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, मन-कर्म -वचन और ये न ले करके, देखो, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ और ग्यारहवाँ मनस्त्व, मानो ये ग्यारह होता होते हैं। इनको हमारे यहाँ होता के नामों से गणना में लाया गया है। और यह कहा कि ये होता हैं । होता किसे कहते हैं? बेटा! होता के सम्बन्ध में बड़ी विचित्र एक उड़ान है। प्रथम तो होता उसे कहते हैं, जो हूत करने वाला है, जो अग्नि को चेताने वाला है।

अग्नि-चेताने की विधा

अग्नि हमारे यहाँ दो प्रकार से चेताई जाती है, एक भौतिक-अग्नि है और एक आध्यात्मिक अग्नि कहलाती है, मेरे प्यारे! देखो, भौतिक-अग्नि तो ये है कि हम इस संसार में हमारा व्यवहार, हमारी प्रतिपदा कैसी रहनी चाहिए। मानो देखो, हम प्रातःकाल अग्नि का चयन करते हैं, या प्रातःकालीन् ब्रह्म का चिन्तन करते हैं, और प्रातःकालीन् जब ब्रह्म का चिन्तन करते हैं तो मानो उसके पश्चात् अग्नि का चयन करते हैं अग्नि का चयन करने वालों में, मेरे प्यारे! देखो, यहाँ नाना राजा इस प्रकार के हुए हैं, नाना ऋषि इस प्रकार के हुए हैं, जो प्रातःकालीन् अग्नि का चयन करते रहे हैं। अग्नि का चयन करने का अभिप्रायः यह है कि समिधा के द्वारा अग्नि को चेताना है, तीन समिधा के द्वारा अग्नि को चेताना है।

आत्मा को चेताने का साधन

बेटा! तीन प्रकार की अग्नि क्या है? विचार आता रहता है, तीन प्रकार की अग्नियों का चयन, मानो देखो, ज्ञान, कर्म और उपासना के द्वारा यह तीन समिधा के रूप में आत्मा हो साधक, मुनिवरों! देखो, चेताता रहता है। और, वह चेताने वाला कौन? मानो देखो, जो साधक है, जो अग्नि के द्वारा मानो देखो, अपने को चेताना चाहता है। आत्मा को ऊर्ध्वा में ले जाना चाहता है, आत्मा का उत्थान करना चाहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ज्ञान और प्रयत्न के द्वारा आत्मा का उत्थान होता है, आत्मा की प्रतिपदा का निर्माण होता रहता है।

होता और द्यौ

आओ, मेरे प्यारे! वेद का मन्त्र क्या कहता है? वेद का आचार्य भी इसी प्रकार ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ रहा है। होता कौन है? जो हूत करने वाला है, जो मानो अपने साकल्य, अपने संकल्प के द्वारा अपने साकल्य को सूक्ष्म बना करके दिव्या मानो अन्तरिक्ष, द्यौ-लोक में उसको प्रतिव्राजित कर देता है। उसको मानो प्रतिपादित करता हुआ वह अपने में मानो देखो, इस ब्रह्माण्ड का दर्शन करने के लिए तत्पर रहता है।

अग्नि-चयन के सोपान

तो आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या? यह तीन प्रकार की अग्नियों का चयन करना है। जिसे हमारे यहाँ, गार्हपथ्य, गृहपथ्य और वैश्वानर कहते हैं। यह तीन प्रकार की अग्नियों को चयन हुआ करता है। तो मुनिवरों! देखो, इन तीन प्रकार की अग्नियों का चयन करने वाला इस अग्नि को चेताता है। आगे यही अग्नि, बेटा! आध्यात्मिकवाद में परिणत हो जाती है।

मानो देखो, आध्यात्मिकवादी वाली जो अग्नि है, वह आत्मा के समीप क्या, मुनिवरों! वह पांच ज्ञानेन्द्रियों का जो रूप है, मानो उसका साकल्य बना करके, सामग्री बना करके, उसका साकल्य-चरू बना करके, मेरे पुत्रो! देखो, प्रत्येक ज्ञानेन्द्रियाँ-कर्मेन्द्रियों का जो वृत्त है, उसमें अपने में धारमयी बनाता हुआ, मानो देखो, उसके पंचाग्नि में देखो, ज्ञानरूपी अग्नि में उसे हूत करता है तो जब वह ज्ञानरूपी अग्नि, बेटा! उद्बुद्ध हो जाती है।

आत्म-अग्नि और ब्रह्म-अग्नि

ज्ञानरूपी अग्नि जब उद्बुद्ध हो जाती है, तो मानो जब ज्ञान के स्वरूप में प्रवेश होता है, तो मुनिवरों! अपने प्रभु का वह प्रायः अपने में, देखो, एक-एक परमाणु में दर्शन करने के लिए तत्पर हो जाता है। विचार क्या? मुनिवरों! यह अग्नि है, इसका चयन करना बहुत प्रियतम है। तो मेरे प्यारे! देखो, यही अग्नि अपने में धृति बनी हुई है, यही अग्नि, बेटा! देखो, आत्म-ग्लानि कहलाती है, जो ब्रह्म से मिलान करती है, इसे ब्रह्माग्नि भी कहते हैं।

अग्नि-चेतक-होता

मेरे पुत्रो! देखो, यह वर्णा ब्रहे होता किसे कहते हैं? प्रश्न यही है कि होता वही कहलाता है जो अग्नि को चेताता है और यज्ञमान की वाणी को पवित्र बना देता है, यज्ञमान की वाणी को अन्तरिक्ष और द्यौ-लोक में पहुँचा देता है। वे होता कहलाते हैं। हूत करने वाले, मानो देखो, अध्वर्यु के द्वारा उद्गीत गाने वाला, वह अपने को अन्तरिक्ष में देखो, अग्रकृताम्, तो एकादशो, मानो एकादशी इन्द्रियों में और मनस्त्व में परिणत हो करके, बेटा! इन्हें एकाग्र करना है। जब हमारी दसों इन्द्रियाँ, ग्यारहवाँ मन, मुनिवरों! जब एकाग्र हो जाते हैं, एकाग्र इनका सर्वोभूत बन जाता है, तो वह याज्ञिक, मानो वह ग्यारह होताओं के द्वारा यज्ञ को सम्पन्न करता है, याग को ऊर्ध्वा में ले जाता है।

वैशम्पायन-अश्वपति का होता-चिन्तन

मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि हे मानव! तू अपनी आभा को ऊर्ध्वा में परिणत कर, महाराजा अश्वपति के यहाँ, प्रायः इस प्रकार के यागों का चयन, इस प्रकार के विचारों का प्रायः चयन होता रहता था। बेटा! एक समय महर्षि, देखो, राजा अश्वपति ने, महर्षि वैशम्पायन से यह कहा कि- प्रभु! मैंने कहीं यह श्रवण किया है कि याग मानो ग्यारह होताओं के द्वारा होता है। वे ग्यारह होता कौन से होते हैं? तो महर्षि वैशम्पायन ने कहा कि- पांच कर्मेन्द्रियाँ, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, ग्यारहवां मनस्तव, ये मानो देखो, ग्यारह होते हैं, जिनके द्वारा राष्ट्र का संचालन हो रहा है, जिसके द्वारा ब्रह्माण्ड का संचालन हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, इसी में प्राण-वृत्ति रहता है, एक-एक इन्द्रियों का एक-एक प्राण कहलाता है और इन प्राण

और देखो, इन इन्द्रियों का, दोनो का संगठित हो करके यह मानव का शरीर स्थिर रहता है। और, यही जब बाह्य जगत् में प्रविष्ठ होते हैं तो यह ब्रह्माण्ड का अधिपति, अधिपथ्य करने वाला है। क्योंकि यह ब्रह्माण्ड भी मानो देखो, किसी के आश्रित रहता है। तो वेद का आचार्य कहता है, यह पांच प्राणों, पांचो इन्द्रियों के आश्रित रहने वाला ब्रह्माण्ड है, जो क्रियाकलाप हो रहा है। जो मानो देखो, इस ब्रह्माण्ड को मापना चाहता है, वह इस प्रकार इसको माप लेता है।

ग्यारह रूद्र

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वाक्य वर्णन किया तो वैशम्पायन से महाराजा अश्वपति ने पुनः यह प्रश्न किया कि - महाराज! यज्ञं ब्रह्मः लोकाम्, मानो ये जो याग हो रहा है, इसमें मानो ग्यारह होता कौन से हैं? तो उन्होंने कहा कि- ग्यारह होता, वह मानो देखो, ग्यारह रूद्र कहलाते हैं। इसको देखो, अब्रहे, मानो देखो, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और पांच प्राण हैं और ग्यारहवाँ देखो, इनमें मन यह सुगठित रह करके, यह रूद्रो वृत्तं ब्रहे मानो देखो, ये रूद्र कहलाते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने जब वर्णन किया वर्णन करते हुए उन्होंने अपनी शैली में वडी विचित्र वाक्यों का वर्णन किया, तो मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन और राजा अश्वपति दोनों अपने में मौन हो गये।

ग्यारह सूत्र

उन्होंने कहा- भगवन्! इन ग्यारह को, इनको कटिबद्ध करने वाला कौन है? तो महर्षि वैशम्पायन बोले कि- इनको कटिबद्ध करने वाला मानो देखो, यह वृत्तं ब्रह्मा सम्भवे, इनको कटिबद्ध करने वाला, एक प्राणत्व कहलाता है, एक गति कहलाती है। मानो, वही गतिवान्, इस संसार को अपने में धारण कर रहा है, जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में शिशु का निर्माण होता है, हम जैसे पुत्रों का निर्माण होता है, परन्तु निर्माणवेत्ता निर्माण करके आत्मा में, प्रत्येक अंग और प्रत्यंग को मानो उसमें पिरो देता है, और वह स्वतः मानो वह आत्मतत्व, यह आत्मवान् भी ब्रह्म में पिरोया जाता है, तो मानो वह ब्रह्म ही इसका सूत्र कहलाता है।

सूत्र का सूत्र

मेरे प्यारे! ऋषि ने जब इस प्रकार अपना वर्णन किया तो वैशम्पायन ने पुनः कहा- प्रभु! वह सूत्र कौन है? और वह किसको धारण कर रहा है? तो मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन बोले कि वह सूत्र मानो गतिवान् है, वह सूत्र ही गतिवान् है जिसमें यह सर्वत्र पिरोया हुआ ब्रह्माण्ड है। सर्वत्र वह लोक-लोकान्तर पिरोया हुआ है। और, उसे कौन, मानो देखो, अपने में अपने को पिरोने वाला है? वह मानो एक ब्रह्म कहलाता है। वह सूत्र कहलाता है। मानो जगत् की माला बन जाती है।

शिकामकेतु का शब्द-माला दर्शन

इस जगत् के प्रत्येक, जैसे मानव का शब्द है। एक समय, बेटा! उन्होंने एक प्रमाण देते हुए कहा कि भगवन्! एक समय हम उद्दालक-गोत्र में चले गये। उद्दालक-गोत्र में शिकामकेतु ऋषिवर और उनकी पत्नी शकुन्तका मानो प्रातःकालीन् वह देवयाग कर रहे थे। देव-पूजन कर रहे थे। तो पूजन करके मानो देखो, वह ऋषि का, जब हमारा वहाँ आगमन हुआ, तो हमने ये प्रश्न किया कि वताईए भगवन क्या कर रहे हैं। उन्होंने कहा, हम सूत्रों की माला बना रहे हैं? सूत्रों में माला बनाना चाहते हैं। प्रत्येक मनके को पिरोना, पिरोने के लिए तत्पर हैं। उन्होंने कहा, क्या तुम जानते हो उस सूत्र को? उन्होंने कहा, उस सूत्र को हम जानते हैं। जैसे, एक मानव, एक शब्द उच्चारण कर रहा है, परन्तु शब्द की माला बन जाती है, उस शब्द की उतने आकार वाली माला बन गई, जितने आकार वाला वह प्राणी है, जिसका वह शब्द है, उतने आकार वाला चित्र बना करके मानो देखो, वह द्यौ-लोक में

प्रवेश हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने ये वर्णा कराया, तो तब यह कहा गया कि- प्रभु! क्या आप उस माला का आप हमें दर्शन करा सकते हैं? उन्होंने कहा- हम दर्शन करायेंगे। मेरे प्यारे! देखो, शिकामकेतु उद्दालक मुनि के यहाँ यन्त्र विद्यमान थे। उन्होंने अपने यन्त्रों में, अपने पूर्वजों के जो शब्द अन्तरिक्ष में, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, जो अन्तरिक्ष में गमन कर रहे थे, मेरे प्यारे! उन शब्दों का आकार उन शब्दों में जो क्रियाकलाप, उनके चित्र, मेरे पुत्रो! देखो, वैज्ञानिक यन्त्र उनके यहाँ विद्यमान थे, उन यन्त्रों में उनका चित्र उन्हें दृष्टिपात आ रहा थां उन्होंने कहा- हे वैशम्पायन! यह दृष्टिपात करो। क्या, यह हमारे पूर्वजों के चित्र मानो चित्रित हो रहे हैं और यह, अन्तर ब्रह्मे, देखो, गमन कर रहे हैं।

तो मेरे प्यारे! अग्नि की धाराओं पर, अग्नि की तरंगों पर वष्ट-कृतिका जो अग्नि है, उसकी धाराओं पर विद्यमान हो करके एक माला नहीं, दो माला नहीं, अनन्त माला हैं जिनकी गणना नहीं कर सकते। जितने शब्द हैं, उतनी ही मानो देखो, माला हैं। एक सूत्र में पिरोयी हुई, एक माला बनी हुई है। जिस प्रकार, बेटा! वेदमन्त्रों की एक माला है, प्रत्येक शब्द कहाँ प्रतिपादित होना है, और कहाँ किस शब्द को विजातीय और सजातीय सजाना है, मानो देखो, वह माला कहलाती है, इसी प्रकार, मानं ब्रह्मं ब्रह्व कृतम्, यह एक माला है। प्रत्येक शब्द की माला बन जाती है।

शरीर रूपी माला

मेरे प्यारे! देखो, जैसे माता के गर्भस्थल में एक माला ही तो बन रही है। परन्तु देखो, उस माला को, उस माला का, कोई परमाणु का कोई सूत्र बना हुआ है, किसी का कोई सूत्र बना हुआ है। मानो परमाणुओं की एक माला बन करके अणु के रूप में और अणु की माला बन करके, मानो देखो, शरीर रूपी, माला के रूप में, बेटा! वह माला, देखो, उस माला का सूत्र आत्मा कहा जाता है। वह आत्मा जो सूत्र है, उससे पिरोएं हुए प्रत्येक परमाणु हैं। जब आत्मा इस शरीर से पृथक् होता है, तो माला का विच्छेद होना प्रारम्भ हो जाता है और जब माला का विच्छेद होता है तो केवल एक सूत्र रह जाता है और यह माला अपने-अपने स्वरूप में रत्त हो करके मेरे प्यारे! आत्म चेतना के संस्कार की माला को ले करके, वह अपने चित्त के मण्डल में प्रवेश कर जाता है। तो विचार-विनिमय यह विज्ञान अपनी आभा में बड़ा विशिष्ठ और महानता में गति करता रहा है।

तो आओ, मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन और शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज की बड़ी विचित्र एक चर्चा होती रही है। बड़े विचित्र आभा में वह रत्त होते रहे। उन्होंने, बेटा! अपने पूर्वजों के मानो चित्रों का उन्हें दर्शन कराया और महानता में ज्योति बनाने, ज्योतिवान् होने के लिए उन्होंने अपना नृत्य किया। तो मेरे पुत्रो! विचार क्या? विचार केवल यह कि, मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन ने राजा से कहा, - हे प्रभु! यह जो सूत्र है, एक्र-दूसरे में पिरोया हुआ सूत्र है, एक-दूसरे में सूत्रित होता हुआ जगत् है, एक-दूसरे में सूत्रित होता हुआ परमाणु है, एक-दूसरे में सूत्रित होता हुआ अणु रूप में वह सृष्टि का अवधान गतिवान् हो रहा है।

यज्ञ का सूत्रीकरण

मेरे प्यारे! देखो, जब वैशम्पायन ने यह वर्णन कराया तो राजा अश्वपति ने कहा- प्रभु! यह याग, मानो देखो, याग अपने में क्या है? यह कौन-सा सूत्र कहलाता है? और यह कौन-सी माला कहलाती है? तो राजा ने यज्ञमान बन करके अपने ऋषि से यह प्रश्न किया तो महर्षि वैशम्पायन बोले कि- यह जो याग है, यह ब्रह्माण्ड रूपी मानो एक नृत्य हो रहा है। यह नृत्य हो रहा है और ब्रह्म-सूत्र में मानो देखो, नृत्य पिरोया हुआ है। वह उसमें ब्रह्मसूत्र में पिरोया हुआ है। मानो सबसे प्रथम तो यह अग्नि में पिरोया हुआ है और अग्नि मानो देखो, चन्द्रमा में

पिरोयी हुई है, और चन्द्रमा सूर्य में पिरोया हुआ हैऔर यह सूर्य द्यौ में पिरोया हुआ है और यह द्यौ मह रूप में पिरोया हुआ है और मह रूप है, वह अन्तरिक्ष में गतिवान् हो रहा है।

महत् सूत्रवान्, सूत्रमान है

मेरे प्यारे! ऋषि ने बड़ा सुन्दर गम्भीरतम, यह उत्तर दिया तो विचारवेत्ता ने कहा, धन्य है, भगवन्! राजा ने कहा, ऋषिवर! आगम ब्रह्मे मानो देखो, याग जो सूत्र है, याग का जो सूत्र है, वह द्यौ है, यह कहलाता है, परन्तु हम यह जानना चाहते हैं, राजन्! ऋषिवर! क्या इसके द्वितीय रूप में द्यौ और देखो, अन्तरिक्ष का, द्यौ का मह भी कोई सूत्र बना हुआ है अथवा नहीं? तो उन्होंने कहा कि -मह का कोई सूत्र नहीं हुआ करता है, यह मन अपने में मह कहलाता है, वह शून्यता में रत्त रहने वाला है। मानो देखो, उसका कोई सूत्र नहीं हुआ करता, वह किसी का सूत्र होता है, वह मानो देखो, सूत्रों में सूत्रित होने वाला एक कृत है। मानो देखो, उससे ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ते हुए ऋषि ने कहा, कि प्रभु! यह तो आत्म-ब्रह्म है। तो मेरे प्यारे! देखो, राजा भी मौन हो गया। ऋषि भी मौन हो गये।

एक और दशमयी गणना-विधान

उन्होंने, ऋषि ने पुनः प्रश्न किया कि महाराज! हमारी जो दिव्या है, जो यज्ञ के आंगन में विद्यमान है, वह आपसे कुछ जानना चाहती है। उन्होंने कहा, हे ऋषिवर! हम सब यज्ञशाला में विद्यमान हैं और ग्यारह होताओं का प्रसंग चल रहा है, तो भगवन! यह ग्यारह ही क्यों है? उन्होंने कहा-देखो, संसार की जितनी गणना है, जितनी गणना का अवधान है, वह केवल देखो, एकादशो से प्रारम्भ होता है। एकादशो से गणना का प्रारम्भ हुआ करता है, आगे शून्य बिन्दु की आभा में, मानो सर्वत्र गणना निहित रहती है। इसीलिए यह गणना का जो स्रोत है, वह केवल एकोदशो से माना गया है

ग्यारह से समन्वित प्रकृतिवाद

हमारी दस इन्द्रियाँ हैं, जो संसार के क्रियात्मक में रत्त हैं और, वह ग्यारहवां मन कहलाता है। दस इन्द्रियाँ, ग्यारहवां मन। तो मनस्त्वं ब्रह्मे इस मन में गुथा हुआ, यह प्रकृतिवाद है। जितना भी प्रकृति का वाद है, जितना भी स्थूल जगत् है, चाहे वह मानो गुरूतव के रूप में हो, चाहे तरलतव के रूप में हो, चाहे वह तेजोमयी रूप में हो परन्तु सर्वत्र का केवल एक ही सूत्र है कि वह मनस्त्वं ब्रह्मे आभं ब्रह्मः यह सब मनो से गुथा हुआ, मनस्त्व से गुथा हुआ है, एकादशो से गुथा हुआ कहलाता है। तो मानो ब्रह्मे कृतं ब्रह्मः, वेद के आचार्य ने बेटा! इस सम्बन्ध में बड़ी विचि. उड़ाने उड़ी। और इनका ग्यारह का हमारा समन्वय, मानो देखो, हमारे जीवन में, हमारे अन्नाद से हुआ करता है।

एकादशी चन्द्रमा-कला

तो मुनिवरों! देखो, यहाँ आ करके, देवी, दिव्यासे अपने में मौन होने लगी और मौन हो करके पुनः उसके अन्तर्हृदय में एक जागरूकता आई, एक वेद की आख्यिका स्मरण आयी, उन्होंने कहा, प्रभु! यह जो एकादशो है, इसका क्या अभिप्रायः है? उन्होंने कहा, एकादशं ब्रह्मे, मानो एकादशो में मानो देखो, चन्द्रमा की ग्यारहवीं कला का उद्बुद्ध हुआ करता है। चन्द्रमा के एक पक्ष में ग्यारहवीं कला का उद्बुद्ध होता है, तो एक पक्ष में मानो देखो, ग्यारहवीं कला का क्षय हो जाता है, तो क्षय-उद्बुद्ध होना, इसमें ही देखो, एकादशों से इसका प्रारम्भ, इसी प्रतिभा का जन्म होता रहता है।

याग में द्यौगम्यता का रहस्य

तो मेरे पुत्रो! देखो, यह बड़ा विचित्र, ऋषि ने, अपना एक वाक्य बनाया। परन्तु दिव्यासे ने कहा, हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि अमृत ब्रह्मे वाचप्रह्व, क्या है प्रभु! वेद की आख्यिका यह कहती है कि यह जो हमारी परमाणु-सत्ता है या याग में जिसका हमारा समन्वय रहता है, यह याग द्यौ-लोक में छायमान हो जाता है, यह कहाँ तक यथार्थ है? उन्होंने कहा, दिव्यासे! प्वित्र है। यदि उद्गीत गाने वाला पवित्र है, उद्गीत गाने वाला, अन्तरात्मा से उद्गीत गाता है और वेद के मन्त्रों में विशुद्ध, देवतव, मनस्तप्रीही मन उसमें रत्त लगाने वाला है, उसमें पुट लगाता रहता है, तो मानो देखो, यज्ञमान का जो शब्द है, उद्गाता का, अध्वर्यु का जो शब्द है, वह शब्द मानो देखो, अग्नि की तरंगों पर विद्यमान हो करके सूर्य की किरणों में और किरण मानो द्यौ-ऊर्ज्वा में और, द्यौ में और मानो देखो, द्यौ में, यह संसार छायमान हो जाता है। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने बड़ी ऊर्ध्वा में यह वाक्य प्रगट कराते हुए कहा कि दिव्यासे! मेरे विचार में तो ऐसा ही आया है।

उद्गाता कौन है?

मेरे पुत्रो! देखो, देवी ने पुनः यह प्रश्न किया कि- महाराज! यह उद्गाता का क्या अभिप्रायः है? उन्होंने कहा, उद्गाता जो उद्गीत गाता है, जो आत्मा से गाता है, जो मन और प्राण को एक सूत्र में ला करके, तन्मय हो करके गान गाता है, जो मन-कर्म-वचन से गात गाता है, जो मानो देखो, रजोगुण-तमोगुण-सतोगुण को अपने में देखो, ऊर्ध्वा में, देखो, उसे ध्रुवा से त्याग करके ऊर्ध्वा में गान गाता है, वही तो - कहलाता है।?

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने बड़े वृद्ध प्रहा, देवी के प्रश्नों का उत्तर दिया। परन्तु वह अपने में शान्त हो गई और राजा से कहा प्रभु! आपका जो मानो यह ऋषि है, यह तो महापूज्य है। यह तो देवतव को प्राप्त हो गया है। मानो देखो, इसकी वाणी में इतना उद्गार, इसकी वाणी में इतनी विद्या का स्रोत गमन कर रहा है। तो मानो देखो, वह पूज्य है। अब हम इसका पूजन करें, याग का पूजन करें।

ग्यारह में प्राण-गति

मेरे प्यारे! देखो, विचार यह प्रारम्भ हो रहा था, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने ब्रह्मचारियों से यह नाना प्रकार की युक्तियाँ देते हुए, ब्रह्मचारियों को यह निर्णय कराया कि ग्यारह होताओं के द्वारा यह याग हो रहा है। प्रश्न-कर्त्ता कह रहा है कि - महाराज! यह यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता हों? तो ऋषि कहता है, ग्यारह होता होने चाहिए। एकादशो, देखो, दस इन्द्रियाँ कहलाती है, दस इन्द्रियाँ और ग्यारहवां मन इनमें गुथा हुआ रहता है, इसीलिए मन को एकाग्र करके इसको प्राण में सिमट जाना चाहिए। मन को प्राण ही समेट लेता है, तो इसीलिए देखो, मन का प्राण में समेट लेना है।

साधना में मन-प्राण-एकाग्रता

जब साधक साधा करता है, तो साधना करने वाला, मुनिवरों! देखो, मन को एकाग्र करता है। एकाग्र का आश्रय लेता है, प्राण का आश्रय लेता है, और प्राण का अपान का आश्रय लेता है और अपान का समान का आश्रय लेता है और समान का व्यान का आश्रय ले करके उदान के समीप जा करके यह मन की एकाग्रता हो जाती है।

अंगद की प्राण-साधना

मेरे प्यारे! यह तो मैं एक बड़ी विचित्र प्राण की प्रतिभा में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। बेटा! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा है कि प्राण अपने में बड़ा अनूठा माना गया है, बड़ा विचित्र माना गया है। बेटा! प्राण की साधना करने वाला, प्राणेश्वर कहलाता है। यह मानव सर्वत्र बलिष्ठ होता हैं। तुम्हें यह दृष्टिपात हो गया

होगा मैंने कई काल में का वर्णन कराते हुए कहा था कि राजा रावण की सभा में जब अंगद मानो दूत बन करके पहुँचे थे तो उन्होंने यही कहा था- जो मेरे पग को मेरी एक स्थली से दूसरी स्थली पर स्थिर कर देगा, मैं यहीं से, मानो राम को मैं अपने राष्ट्र में ले जाऊंगा और मैं रावण को विजयी स्वीकार कर लूंगा। तो मानो देखो, रावण के राज्य में कोई भी ऐसा बलिष्ठ नहीं था, जो अंगद के प्राण-सखा मानो पग को एक स्थली से दूसरी स्थली पर कर सके। यह प्राणों की विद्या है। प्राण को एक अंग में लाना, प्राण को एक पग में ले आना, दूसरे पग में लाना, हृदय में प्राण को स्थिर कर देना, भुजाओं में प्राण को ले आना, यह प्राण की बड़ी विचित्र विद्या है। मानो देखो, हमारे ऋषि-मुनियों के मध्य में प्रायः यह विद्या अपनी संखा बन करके रही है। तो मुनिवरों! देखो, जब रावण की सभा में पग को स्थिर कर दिया तो रावण की सभा में कोई भी बलिष्ठ ऐसा नहीं था जो इस पग को दूरी कर सके। तो मंगल ब्रहे मानो देखो, जब, अमृताम्, यह प्राण की सखा एक विद्या होती है।

योगी की लोक-लोकान्तर यात्रा

बेटा! देखो, प्राणों का कुम्भक प्राणायाम करता हुआ योगीजन मानो देखो, जल के ऊपर जैसे नौका गमन करती है, ऐसे ऋषि गमन करने लगता है। मेरे प्यारे! अन्तरिक्ष में ऐसे उड़ाने उड़ने लगता है, जैसे वायुयान जा रहा हो। मानो देखो, वह एक-दूसरे लोक में एक-दूसरे लोक से, दूसरे लोक की यात्रा करने वाले ऋषि रहे हैं। मेरे पुत्रो! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ यह तो योग का विषय है, आज मैं योग की प्रतिक्रियाओं में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ

बेटा! मैं आज तुम्हें यह विचार देने के लिए ही हमारे यहाँ दो प्रकार के विज्ञान हैं-एक आध्यात्मिकवाद है, एक भौतिक-विज्ञान कहलाया गया है। आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक-विज्ञान दोनों अपने में बड़े सखा बन करके रहते हैं। और दोनों एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, जैसे प्राण, अणु और परमाणुओं का समन्वय करता हुआ वैज्ञानिक, यन्त्र का निर्माण करके और वह लोक-लोकान्तरों की यात्रा करता है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एक ऐसा यान था, ऐसे परमाणुओं का सुगठित था, वह जानते थे, मानो विज्ञान, बेटा! सभी जानते हैं।

भारद्वाज का लोकान्तरी यान-विज्ञान

मुनिवरों! देखो, मुझे वह काल स्मरण है, जब महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के विद्यालय में से यान गमन करता है, यन्त्र गमन करता है, ब्रह्मचारी उसमें विद्यमान हैं, बेटा! पृथ्वी से उडान उडता है, चन्द्रमा में चला जाता है, वह शुक्र से गमन करता है, उससे उड़ान उड़ता है तो वह बुद्ध में चला जाता है, बुद्ध से उड़ान उड़ता है मंगल में चला जाता है, मंगल से उड़ान उड़ता है तो मृचिका में चला जाता है, मृचिका-मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो घटोतमण्डल में चला जाता है, घटोतमण्डल से उड़ान उड़ता है, वृत्तिका-मण्डल में चला जाता है, वृत्तिका-मण्डल से उड़ान उड़ता है, व्रेतकेतु-मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, बेटा! मूल यह क्या, वह बहत्तर लोकों का गमन करके पुनः ऋषि के आश्रम में यान गमन करता रहा है। तो विचार-विनिमय क्या? बेटा! आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक-विज्ञान अपनी स्थलियों में बड़ा विचित्र बन करके रहा है बड़ा प्रतिभाशाली बन करके पुत्रो! विज्ञान अपने में पनपता रहा है।

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, आज बेटा! तुम्हें यह वाक्य उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि हमारे ग्यारह होताओं के द्वारा याग होना चाहिए, जिससे, बेटा! सर्वत्र विज्ञान, सर्वत्र यौगिकता उसमें निहित होती जाएं। तो बेटा! आज का विचार क्या? विचारों का अभिप्रायः यह है कि मन से प्रत्येक इन्द्रियाँ पिरोयी हुई हैं। और इन्द्रियों का विषय सब प्रकृति का विषय है, और वह मन-प्राण से जब तक समन्वय नहीं कर सकता, यह मानव

अपने आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक-विज्ञान दोनों की परस्पर समन्वय-माला नहीं बना सकता और जब तक माला नहीं बनती तब तक मानव का जीवन कटिबद्ध नहीं होता, जीवन में प्रतिभा का प्रति-स्रोत नहीं होता।

तो बेटा! यह आज का हमारा वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है, आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि नाना ऋषियों के बिखरे हुए परमाणु, बिखरे हुए विचारों को एकत्रित करने का हमारा यह कर्त्तव्य है। शेष चर्चा तो हम कल ही उच्चारण करेंगे। आज का वाक्, अब बेटा! यह समाप्त होने जा रहा हैं।कल मुझे समय मिलेगा, बेटा! तो इससे आगे की शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। रासना १७-०३-१९८८

७ आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान की एक रूपता १८-०३-१९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का पठन-पाठन करते चले जो रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है जिस प्रकार ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, इसी प्रकार, प्रत्येक वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा है अथवा उसके गुणों की प्रतिभा और उस ब्रह्माण्ड के लिए ऊर्ध्वा में उड़ान प्रत्येक रूप में उस परमात्मा का विज्ञान प्रायः हमें दृष्टिपात आता रहता है।

मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! हमने वर्णन करते हुए कहा था, कि इस संसार में दो प्रकार का ज्ञान और विज्ञान है अथवा दो प्रकार का विज्ञान हम स्वीकार करते रहते हैं एक विज्ञान आध्यात्मिकवाद है, और दूसरा विज्ञान भौतिकवाद कहलाता है, परन्तु सृष्टि के प्रारम्भ में, ऋषि-मुनियों ने यह स्वीकार किया, अनुसंधान के पश्चात, क्या जो भी आध्यात्मिकवाद में मानव प्रवेश करता रहा है, उसको उससे पूर्व भौतिक विज्ञान अथवा भौतिकवाद को जानना बहुत अनिवार्य है, क्योंकि भौतिकवाद को जाने बिना कोई भी मानव आध्यात्मिकवाद में प्रवेश नही कर पाता। यह सार्वभौमिक सिद्धान्त और एक विचार माना गया है वेद के किसी भी मन्त्र के ऊपर, जब अन्वेषण अथवा अनुसन्धान करने के लिए मानव तत्पर हुआ है, उसी काल में, उस मानव को दो प्रकार की उपलब्धियां हुई है। एक भौतिकवाद और दूसरा आध्यात्मिक विज्ञान, तो आध्यात्मिक विज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जिसमें मानव समष्टि, व्यष्टि से समष्टि के मार्ग में जाना है, उस क्षेत्र में प्रवेश करना है। परन्तु भौतिक विज्ञान एक ऐसा विज्ञान है, क्या जिस विज्ञान में जाते-जाते, बहुत दूरी चला जाता है प्राणी अपने में अनुसनधान तो प्रायः करता ही रहता है परन्तु देखो, ये भौतिक विज्ञान जब तक इसमें आध्यात्मिकवाद की पुट नही लग पाती, तब तक यह सफलता को प्राप्त नही होता। तो यह दो प्रकार की विचार धाराएं, प्रायः हमारे यहाँ लघु मस्तिष्कों में नृत्त करती रही हैं। मानो उसमें ओत-प्रोत रही हैं, तो इसीलिए हमें विचार-विनिमय करना है, कि दोनों प्रकार का ज्ञान और विज्ञान में हमें रत्त होना है परन्तु ऋषि-मुनियों ने एक-एक आभा में बड़ा विचित्र एक नृत्त किया है और उस सम्बन्ध में बहुत अनुसन्धान अथवा उसके गर्भ में जाने का मानव ने प्रयास किया, परन्तु आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में, एक बड़ी विचित्र वार्त्ता आ रही थी, एक बड़े विचित्र शब्दों को प्रतिपादन हो रहा था, जिनमें यह वर्णन किया जा रहा था, सम्ब्रहे व्रत्यां देवो अलव ब्रीहि कृतं यज्ञाः तो यह मानव अपने में उड़ाने उड़ता रहा है, क्या मृत्यु के सम्बन्ध में विचार आता रहता है।

मृत्यु विमर्श

तो वेद का मन्त्र कहता है, हम मानव तेरी मृत्यु नही होनी चाहिए क्योंकि तुझे मृत्युंजय बनना है और मृत्युंजय कौन बनता है जो मृत्यु को जान लेता है, मानो मृत्यु के मूल को हमें जानना है, मृत्यु के स्वरूप को जानने के लिए मानव इस संसार में आया है परन्तु मृत्यु का अभिप्रायः क्या है आज जहाँ भी मानव अपने में मानवीयता का स्वरूप, अपने समीप लाता है, तो वही उसे मृत्यु दृष्टिपात आती है, मेरी प्यारी माता मृत्यु में हैं, विचार रही है कि मेरी मृत्यु आ गई है। मानव यह भी कल्पना कर रहा है, कि मृत्यु आ गई है परन्तु देखो, ये सर्वत्र मानो जो प्राणी समाज है, ये मृत्यु के आँगन में मानो सदैव गमन कर रहा है और यह कहता है, कि

मृत्युंजम ब्रह्मा व्रते वेदमन्त्र यहाँ यह कहता है, मानव! तू मृत्यु से पार हो, और जितने भी संसार में अनुष्ठान होते हैं, अथवा क्रियाकलाप होते हैं, उन सर्वत्र क्रियाकलापों में मानो मृत्यु ही विशिष्ठ माना गया है और वह मृत्यु के लिए प्रयास करते हैं मानो जितना भी योगाभ्यास है या अनुष्ठान है अपने में जितना भी सुअध्याय है, अध्ययन है, परमात्मा का चिन्तन हैं उस सर्वत्रता में मानव यही चाहता है, कि मेरी मृत्यु नही आनी चाहिए।

महर्षि लोमश और महर्षि काग भुषण्ड जी की चर्चाएं

परन्तु मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब बेटा! महर्षि लोमश और महर्षि कागभुषुण्ड दोनो अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, विचार-विनिमय करते रहते थे। मैंने तुम्हें कई काल में यह वर्णन करते हुए कहा था, क्या महर्षि कागभुषुण्ड जी ने बारह-बारह वर्ष के बारह अनुष्ठान किये, और वह मृत्यु को जानने के लिए, परन्तु महर्षि लोमश अपने में बड़े अद्विदीय और दार्शनिक और यौगिक रहस्यों में गमन करने वाले मानो उनकी धारा बड़ी विचित्र रही है, तो मुनिवरों! देखो, दोनों का परस्पर विचार-विनिमय होता रहा है, और दोनो के विचार में एक ही वाक् आता रहा, कि हम अपने ब्रहे वरूणां प्रति प्रहे हम मृत्यु से कैसे दूर हो सकते हैं तो महर्षि ने यह वर्णन प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा था, क्या मृत्यु को तो जानना ही तो पहले है, जिससे हमें पार होना है वह है क्या? तो मेरे प्यारे! देखो, अनुसन्धान और विचार-विनिमय करते हुए कागभुषुण्ड जी को एक वेदमन्त्र, न्यौदा में से ऐसा वेदमन्त्र स्मरण आया क्या, वह पार होने के लिए, पार होना अज्ञानता से है, अन्धकार से है, रात्रि से है मानो जो ज्ञान से शून्य है। तो यह निर्णय हुआ की, ज्ञान का नाम, ज्ञान का नाम मानो देखो, प्रकाश है और अज्ञान का नाम मृत्यु है, अन्धकार है। परन्तु मृत्यु अन्धकार को त्यागने के लिए, मानव को अध्ययन और तप की आवश्यकता होती है। मानो देखो, जब मृत्यु अपने से दूरी हो जाती है, मृत्यु तो अन्धकार, आलस्य और प्रमाद हो गया है, मानो क्रोधाग्नि भी एक मृत्यु के आँगन में प्रवेश कराने वाली है, तो इसीलिए देखो, मृत्युंजय बनने के लिए मानव यह प्रयास करता रहता है। मृत्युंजय बनने के लिए मानव प्रकाश में जाने के लिए तत्पर होता है, तो दोनो ऋषियों का एक विचार-विनिमय होते हुए यह निर्णय हो गया, कि अज्ञान का नाम मृत्यु है। अन्धकार का नाम मृत्यु है। आलस्य प्रमाद का नाम मृत्यु है। मानो देखो, जो प्रकाश क्या है? एक संकीर्णता को और अन्धकार को त्याग करके जो प्रकाश में चला जाता है, वही तो जीवन वहाँ अन्धकार नही रहता वह न मृत्यु रहती है, तो दोनो का परस्पर एक विचार-विनिमय हो गया।

तो मेरे प्यारे! देखो, एक समय उनके मनों में एक विचार आया क्या आज तो हमारे विचार में यह आता है, कि हम भारद्वाज गोत्र में जाना चाहते हैं और भारद्वाज गोत्र में एक शिकामकेतु ऋषि हैं वह मानो सदैव पति पत्नी अनुष्ठान में रहते हैं और वह अपने में देखो, साधना में परमपिता परमात्मा के चिन्तन और पूजा और वह यागों में परिणत रहते हैं तो मुनिवरों! देखो, दोनों ने अपने में अनुसन्धान ब्रहे महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश दोनों ने अपने आसन से गमन किया और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, भारद्वाज गोत्र में एक ऋषि थे, जिनका नाम शिकाममुनि देखो, रेंगणी भारद्वाज तो रेंगणी ऋषि के द्वार पर पंहुचे उनकी पत्नी ने मानो देखो, दोनो ऋषियों का स्वागत किया, महर्षि रेंगणी भारद्वाज बड़े प्रसन्न हो करके बोले क्या प्रभु! यह हमारा कैसा अहोभाग्य उदय हो गया है? जो ब्रह्मवेत्ताओं का हमें दर्शन हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, उन्हें आसन दिया और वह उनका अतिथि किया। अतिथि करने के पश्चात उनके यहाँ बेटा! अतिथि याग तो होता ही रहता था, अतिथि का अभिप्रायः यह है कि अतिथि आतप्रह्वा दिव्यां ब्रहे वर्णा वेद की भाषा में वेद की प्रतिभा में अतिथि उसे कहते हैं तो अपने विचारों को सुगठित करता हुआ किसी के आसन पर प्रवेश करता है और वह उसका समय नही हैं परन्तु बिना सूचना के गृह में प्रवेश करता है और गृह स्वामी मानो देखो, उसका स्वागत करते हैं और जिस गृह में अतिथि का जान करके

गृहस्वामी और गृहस्वामिनी ने उनका स्वागत नही किया तो जानो वह अतिथि नही हैं। मेरे प्यारे! देखो, स्वागत का अभिप्रायः यह, कि उनके चरणाबिन्दु, हमारे वैदिक परम्परा में नाना प्रकार का स्वागत माना गया है, हमारे यहाँ कणाक देने का नाम भी एक स्वागत है।

आज मैं बेटा! इस प्रतिभा में नही जाऊँगा, केवल विचार यह है कि हमारा वेद का वाक् कहता है क्या जो अतिथि ब्रह्मवेत्ता है, ब्रह्मज्ञान में रत्त रहने वाला है और उनकी कान्ति और प्रथम शब्द से ही गृह स्वामिनी और गृह स्वामी यह जान लेते है कि यह हमारा अतिथि है तो मानो देखो, वह अतिथि कहलाता है। जब वह मनं ब्रह्मा कृतं मेरे प्यारे! देखो, उनकों नाना प्रकार के पदार्थों के पान करने के पश्चात नत मस्तिष्क हो करके पति और पत्नी उनके चरणों की वन्दना में मानो विद्यमान हो गएं और उन्होंने कहा, अतिथि हैं आप हमें कोई उपदेश दीजिए, हमें कोई मानो वाक् उच्चारण कीजिए।

गो का स्वरूप

तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड और लोमश मुनि विचार-विनिमय करने लगे क्या? हम तो कुछ प्रश्न ले करके आयें थें? उन्होंने कहा हे दिव्यां ब्रह्मे जो कुछ जानना चाहते हो, हम उसका यथोचित जितना हम जानते हैं, उसका उत्तर देंगें। तो उन्होंने कहा कि हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि गो किसे कहते हैं, वेद का वाक् था आज के वेद पाठ में भी गो मन्त्रों का विवेचन आ रहा था, तो यह वाक् उन्होंने रेंगणी भारद्वाज औरउनकी पत्नी शकुन्तकेतु ने ये कहा कि प्रभु हम जानना चाहते हैं कि गो किसे कहते हैं? तो मेरे प्यारे! देखो, वह कागभुषुण्ड जी ने कहा भगवन! आप तो बड़े मां व्रते वेदों के जानने वाले हो हम यह जानना चाहते हैं कि गो लौकिकतता में जानना चाहते हो या उसे पारलौकिता में जानना चाहते हो? अब मुनिवरों! देखो, रेंगणी भारद्वाज बोले क्या प्रभु! हम लौकिक और आध्यात्मिक दोनो ही स्वरूपों में जाना चाहते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय दोनों ब्रह्मे ब्रह्मवेत्ताओं ने उत्तर दिया क्या देखो, यदि सामाजिक पद्वति में प्रवेश करना है, तो गो नाम मानो देखो, वाणी को कहा गया है और वाणी जितनी तुम्हारी पवित्र हो जाएगी, उतना तुम्हारा नामोकरण ऊँचा हो जाएगा तो यहाँ वाणी को उन्होंने गो माना है। परन्तु देखो, इसके द्वितीय रूप में लौकिकवाद में हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा की सृष्टि में भिन्न-भिन्न प्रकार के, भिन्न-भिन्न पशु कहलायें जाते हैं तो गो नाम पशु को भी माना। उन्होंने कहा गो नाम पशु का भी हमें पूजन करना चाहिए, पूजन का अभिप्रायः क्या जिसका यथोतिच मानो उसकी आभा में रत्त रहना चाहिए, तो गो नाम पशु को भी कहा है और गो नाम मानो देखो, ज्ञान और विज्ञान को भी गो के रूप में वर्णन किया है।

राष्ट्रीय प्रणाली

तो विचार गो नाम बेटा! पशु को माना है, जो दुग्ध देने वाला पय देने वाला पशु है, उसका नामोकरण दुग्धाहार कहा गया है। हमारे यहाँ राष्ट्रीय प्रणाली में ऋषि-मुनियों ने सृष्टि के प्रारम्भ में, भगवान मनु, ने जब राष्ट्र का किसी काल में निर्माण किया था। तो भगवान मनु से पूर्व राष्ट्र नही था, राष्ट्रीय प्रणाली मानो देखो, आध्यात्मिकवाद में तो हीनता का एक नृत्त कहा जाता है, क्योंकि राष्ट्रीय कोई प्रणाली नही होती राष्ट्रीय प्रणाली तो अनुशासन को ही कहा गया है, और अनुशासन में जो रहने वाला समाज है, अनुशासन में रहने वाला जो प्राणी है मानो इन्द्रियों को जो अनुशासन में निहित कर देता है, वह महान साम्राज्यी होता है, वह साम्राज्य की प्रतिभा में रत्त होता है। परन्तु देखो, हमारे यहाँ राष्ट्रीय प्रणाली में भगवान मनु ने यह सबसे प्रथम नियम बनाया, कि गो नाम के गो नाम के पशु की रक्षा होनी चाहिए। गो नाम के पशु की रक्षा का नाम ही हमारे यहाँ राष्ट्रीय प्रणाली को ऊँचा बनाना है। तो मुनिवरों! देखो, भगवान मनु का यह एक मानो देखो, जब अयोध्या का सबसे प्रथम निर्माण

हुआ, संसार में जितने भी पृथ्वी तल पर, सबसे प्रथम अयोध्या का निर्माण हुआ था, अयोध्या नगरी का निर्माण, भगवान मनु ने किया था, और भगवान मनु ने मानो राष्ट्रीय प्रणाली को और अयोध्या का निर्माण ऐसा किया था, जिसमें आठ चक्र और नौ द्वार हों, नौ द्वारों वाली पुरी और देखो, अष्ट चक्रों वाली पुरी कहलाई। और इसके दो रूप माने गएं हैं जैसे मानव शरीर का प्रभु ने निर्माण किया, तो निर्माण में देखो, यह हमारा शरीर भी आठ चक्रों वाला है और नौं द्वारो वाला है इसी प्रकार भगवान मनु ने अपनी योग प्रणाली के द्वारा उनके जो गुरु थे भगवान मनु के श्वेति मुनि महाराज वह आध्यात्मिकवेत्ता थे, मानो बड़े तपस्वी और वेद के मर्म को तो जानते थे, और नौका में अपने जीवन को व्यतीत करते थे, मानो देखो, वह श्वेति मुनि महाराज उनके आचार्यों ने यह भगवान मनु को कहा कि आठ चक्रों वाली नौ द्वारों वाली पुरी का निर्माण करो। तो यह अयोध्या का नगर ऐसा निर्माण किया था, भगवान मनु ने क्या मानो देखो, वह बड़ा प्रिय लगता, जैसे मानव का शरीर है, मानव के शरीर में भी अष्ट चक्र और नौ द्वार माने गएं हैं ये नौ द्वारो वाली पुरी है मानो देखो, आठ चक्रों वाला यह वृत है, जो ब्रह्मरन्ध्र में जा करके सर्वत्र ब्रह्माण्ड को यह योगेश्वर मापने का प्रयास करने लगता है।

मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में कहा था क्या, योगी देखो, अन्तिम चरण मानो देखो, वह ब्रह्मरन्ध्र में, प्राण मनस्तव और आत्मा का जो नृत्त है जब ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर जाता है, तो उसी से वह प्रवृत्ति लघु मस्तिक में रेणकेतु मस्तिष्क में प्रवेश हो करके प्राण और मन का दोनो का एक सूत्र हो करके मानो सूत्रित हो करके और वह जितना लोक-लोकान्तरवाद है, जितना यह ब्रह्माण्डवाद है, मानो देखो, सर्वत्र लोकों को गणना में लाने लगता है। विचार आता है बेटा! तारामण्डलों को गणना में लाने लगता है, तारामण्डलों की माला बनाने लगता है, और माला को कहाँ दर्शन करता है वह अपने रेणकेतु मस्तिष्क में उसे प्रायः दृष्टिपात करता है।

राष्ट्र का निर्माण क्यों?

आज बेटा! मैं योग के क्षेत्र में तुम्हें नही ले जाऊंगा विचार केवलय यह कि यह अष्ट चक्रों वाली यह पुरी हमारा शरीर है और अष्ट चक्रों वाली अयोध्या का निर्माण भगवान मनु ने किया है और भगवान मनु ने क्यों किया क्योंकि समाज में कुछ अकर्तव्यवाद आ गया था अकर्तव्यवाद जब आ जाता है जब राष्ट्रीय व्यवस्था की आवश्यकता होती है और यदि प्रत्येक मानव अपने-अपने कर्तव्य का पालन करने लगता है तो मुनिवरों! देखो, वहाँ राष्ट्र की आवश्यकता नही होती वहाँ अनुशासन की भी आवश्यकता नही होती यह भगवान मनु ने भी कहा ऋषि-मुनियों का यह पूर्व मानो एक कथन है कि हमारे यहाँ राष्ट्रीय प्रणाली जब ही बनती है जबकि देखो, प्रजा में अव्यवस्था आ जाती है अकर्तव्यवाद आ जाता है, और जब कर्तव्यवाद की प्रतिभा आ जाती है, तो वहाँ आवश्यकता नही होती।

गौ नाम मछली का भी

तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपना वर्णन ब्रहे तो विचार देते हुए मुनिवरों! देखो, उन्होने कहा तो सबसे प्रथम ऋषिवर भगवान मनु, ने आचार्यों से मानो देखो, प्रत्येक प्राणी की रक्षा होनी चाहिए। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि गो नाम वैदिक परिभाषा में गो नाम देखो, मछली को भी गो कहा गया है, मछली का नाम भी गो कहा गया है, देखो, उन्होंने कहा है कि अमृतं ब्रह्मे यह मछली भी अमृत को देने वाली है, जो समुद्रों में गमन करती है तो जो पृथ्वी का विष जाता है जो भी पृथ्वी विष उगलती है, मानों किरणों के द्वारा समुद्रों में प्रवेश करती है, तो वह मछली अपने में सिंचन करने लगती है, उसे निगल जाती है, सूक्ष्म बना देती है। तो मानो समुद्रों का अपना स्वरूप अपनी जगह स्थित रहता है तो मेरे प्यारे! जल के बहुत से प्राणी हैं, माना देखो, जलों में जल प्राणियों के मानो देखो, ऐसा भी माना गया है वहाँ अपना-अपना राज्य भी, अपने में नृत्त

करता रहा है।

भगवान मनु का तप

तो मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मेरे प्यारे! देखो, वहाँ लोमश मुनि कागभुषुण्ड जी ने दोनों ने यह वाक् कहा कि भगवन! मेरे विचार में तो ऐसी ही आता है क्या मानो देखो, गो नाम का, गो नाम मछली को जब भगवान मनु ने नित्यप्रति समुद्र के तट पर मानो तपस्या करते थे और वह तपस्या करते हुए अपने में तपस्वी महान थे तो मानो देखो, ब्रह्मे देखो, जब उन्होंने उस समय देखो, उपासना के लिए संजोग करना ब्रहे मार्जन के लिए उन्होंने समुद्रों में से जल लिया अपने कमण्डल में तो उसमें एक मछली आ गई जब मछली आ गई तो मछली आने के पश्चात तब मुनिवरों! देखो, वह समुद्र में उसका सागर प्रहे जब वह उसको अर्पित करने लगे, तो मछली ने अपनी वेदनामयी अपनी वेदनामयी अपनी वेदना को प्रगट करते हुए, भगवान मनु यह जानते थे क्या यह वेदना प्राणियों की क्या है? मेरे पुत्रों! भगवान मनु ने लगभग एक सौ एक वर्ष का तप करने के पश्चात मानो उन्होंने लगभग सतर हजार जो प्राणी है उनकी भाषाओं की प्रतिभा को जानते थे, वह तो मेरे प्यारे! उनके भावों को जानते थे, वह वाणी से उद्गीत नही गा रहा है परन्तु उसकी जो चयन है, उसका जो क्रिया है, उसका जो कलाप है उसको भगवान मनु जी जान लेते थे यह क्या कह रहा है।

तो जैसे मछली कमण्डलु में आई, तो उन्होंने जब अपनी वेदना में यह कहा कि हे भगवान! हे मनु! क्या हम इसीलिए तुम्हारे कमण्डलु में आ गएं हैं क्या समुद्रों में यह नियम बन गया है, परम्परा का क्या यहाँ देखो, एक सूक्ष्म प्राणी प्राणी है उसको स्थूल निगल रहा है, अपने उदर का भोजन बना रहा है उसे प्रति में रत्त हो रहा है, संसार का ऐसा नियम बना हुआ है तो हे प्रभु! मैं आपके कमण्डलु में इसीलिए आई कि मैं रक्षा चाहती हूँ। भगवान मनु ने कहा बहुत प्रिय। तो कमण्डलु को ले करके अपने आश्रम में आ गये, और आश्रम में आ करके कमण्डलु में कुछ समय तक, उसमें मछली पनपती रही, कुछ समय के पश्चात उसके लिए गदेला बनवाया, उसमें वह पनपती रही, जब वह मछली प्रबल हो गई, तो एक समय मछली कहती है, कि हे भगवन! देखो, एक समय आयेगा, मानो देखो, चतुदर्शी का समय आने वाला है, आज से मानो पांच वर्ष के पश्चात और समुद्रों से जल प्लावन आयेगा और जल प्लावन जब आयेगा, तो मेरा जो मिलन होगा, हिमालय से होगा और समुद्रों के जल प्लावन का मानो देखो, मिलन भी समुद्रों से होगा, और वहाँ अपनी नौका को, आप जकड़ देना।

गो रक्षा में आध्यात्मिकता

तो मुनिवरों! देखो, वह इतना उच्चारण करके और वह बोली अब मैं अपने राष्ट्र में जा रही हूँ मेरे प्यारे! वह समुद्रों में चली गई और भगवान मनु को अप्रतम् मानो वही समय आ गया, कि अब जल प्लावन आ गया उसने अपना वर्णन किया कि मेरे एक सींग होगा, और सिंग में अपनी नौका को जबड़ देना और यह वृत्तियाँ है उनकी रक्षा होगी तो उसी मछली ने भगवान मनु को जल प्लावन में रक्षा की, उस रक्षा का परिणाम यह हुआ रक्षतं ब्रह्मे जब मछली भी रक्षा करती है तो इससे यह प्रतीत होता है भई! हे राजन्! के राष्ट्र में मानो अध्वर्यु तुझे बनना है, अध्वर्यु बन करके तेरे राष्ट्र में गो पशु की ही रक्षा नही मछली इत्यादि सब की रक्षा होनी चाहिए। मानो यह सर्वत्र पशु है, तो यह मानवों को यह ऋषि-मुनियों ने यह उपदेश दिया। भगवान मनु ने यह नियमावली मानो निर्धारित की और उन्होंने एक नियम बनाया कि संसार में राजो को अध्वर्यु बनना चाहिए, अध्वर्यु उसे कहते हैं, जो हिंसा से रहित होता है। तो मानो देखो, उन्होंने कहा हे भगवन! हे भारद्वाज! हे रेंगणी भारद्वाज! मेरा कथन तो यह है कि क्या देखो, यह सब पशु कहलाते हैं, इनका प्राणियों से घनिष्ट समन्वय होता है, और वह एक दूसरे की रक्षा करने वाले होते हैं, इसीलिए जो रक्षा करता है, वह गो कहलाता है, मानो देखो, यह भौतिक विज्ञान की भौतिक परम्परा

है, यह भौतिक जगत है यह प्रत्येक प्राणी की रक्षा करें और प्रत्येक प्राणी हमारी रक्षा करने के लिए स्वतः तत्पर हो जाते है मानो देखो, यह तो भौतिकवाद रहा यह तुम्हारा भौतिकवाद है, और इस भौतिकवाद के पश्चात एक आध्यात्मिक परम्परा आती है, मानो देखो, आध्यात्मिक परम्परा में यह वाणी मानो जो तुम्हारी पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, यह मानो देखो, गो कहलाती हैं, यह गो कहलाती हैं, गो क्यों कहलाती हैं? गो वर्णम् गो रविदत्र प्रभा व्रत्यं देवाः प्रकाशा वेद का वाक् कहता है कि गो की रक्षा किए बिना मानव प्रकाश में नही आ सकता मेरे पुत्रों! यह ऋषि ने कहा लोमश मुनि ने और कागभुषुण्ड जी ने दोनों ने यह कहा कि गो की रक्षा किए बिना मानो देखो, तुम आध्यात्मिकवाद में प्रवेश नही कर पाओगे। मेरे प्यारे! देखो, जहाँ आध्यात्मिकवाद आ गया आध्यात्मिक और भौतिकवाद में पशु का नाम गो है और देखो, जो आध्यात्मिकवाद है उसमें मंगलप प्रहे मानो देखो, इन्द्रियों का नाम पशु गो कहा गया है।

बेटा! देखो, जैसे महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज ने जिज्ञासुओं को यही कहा हे जिज्ञासुओं! तुम हमारे यहाँ एक वर्ष तक गऊओं की सेवा करोगे, तो मैं तुम्हें ब्रह्मज्ञान दूंगा, मेरे प्यारे! देखो, वही ब्रह्मज्ञान जब प्राप्त होता है। तो गऊओं की सेवा से होता है, तो यहाँ देखो, सेवा का अभिप्रायः यह बना क्या? गो कहते हैं बेटा! इन इन्द्रियों को जैसे हमारे शरीर में पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, इनका नाम गो कहा गया है और यह दस मानो इन्द्रियाँ है इनको भी गो कहा गया है तो मुनिवरों! देखो, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियाँ इनके विषयों को जानने का नाम ही मेरे पुत्रों! देखो, गो की सेवा करो गो को लाना है, तो मुनिवरों! देखो, जब भी हमारे यहाँ गो नाम से मानो या श्रोत्र में मेरे पुत्रों! देखो, त्वचा है, वाणी है, यह पांच कहलाए जाते हैं तो बेटा! सबसे प्रथम, हम नेत्रों को ले लेते हैं तो नेत्रों में सुदृष्टिपान करना सु ही दृष्टिपान किया है, मेरे प्यारे! देखो, जैसे हमारी घ्राण इन्द्रियं हैं उन घ्राण इन्द्रियों में मानो पृथ्वी की गन्ध समाई हुई है। समाहित रहती है और समाहित होने से ही मानव गन्ध को लेता रहता है अनुसन्धान करता रहता है मेरे प्यारे! ऐसे बहुत से ऋषि हुए हैं, जो पृथ्वी के गर्भ में जा करके यह विचारेने लगे हैं, क्या इतनी दूरी पर इतना खनिज है, उस खनिज में इतना तत्त्व है। मेरे पुत्रों! देखो, पृथ्वी के गर्भ से जानने का प्रयास किया, हमारे यहाँ नाना वैज्ञानिक जैसे उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु ऋषि हुए हैं, वह शिकामकेतु उद्दालक जब पृथ्वी के गर्भ में, घ्राणेन्द्रियों के द्वारा गर्भ में पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश किया, तो बेटा! वह दस-दस योजन के निचरले भाग को, पृथ्वी के गन्ध और धातु पिपाद को जान करके यन्त्रों का निर्माण करते रहे।

श्रद्धामयी सेवा से ज्ञान

तो मेरे पुत्रों! देखो, यह पृथ्वी प्रहा यह घ्राण इन्द्रियों का विज्ञान है, मेरे पुत्रों! देखो, वाणी हैं, वाणी के दो स्वरूप माने गएं हैं रस को लेना है मानो देखो, षट रस को पान करना है उन रसों में जो-जो रस विद्यमान हैं मानो पृथ्वी का जो भी रस जितना विद्यमान है वह सर्वत्र रसास्वादन में पान कर रहा है, तो बेटा! देखो, सर्वत्र इन्द्रियों को, इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना करके, गो रस बन जाता है और वह गो रस को पान करता है, योगेश्वर करता है बेटा! अथवा आध्यात्मिक विज्ञान में रत्त होने वाला करता है। मेरे प्यारे प्रभु ने मानो देखो, वेद की भाषा में, वेद की परम्परा में अपने बड़े तथ्य विद्यमान होते हैं मानो उन तथ्यों को जानने के लिए, मानव को सदैव तत्पर रहना चाहिए। तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेष तो विवेचना तुम्हें देने नही आया हूँ, मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, केवल परिचय देने के लिए चला आता हूँ और वह परिचय क्या दे रहा हूँ बेटा! प्रत्येक इन्द्रियों का मानो अपने में अपनी कृतियों में रत्त होने के लिए तो मेरे प्यारे! देखो, वह गो नाम के पशु का वर्णन करते हुए कागभुषुण्ड जी ने कहा कि महाराज! यह जो इन्द्रियाँ हैं यह मानो गो कहलाती हैं और यह गो नाम की इन्द्रियाँ हैं इनकी सेवा करने का नाम सेवा का अभिप्रायः क्या इनके वास्तविक स्वरूप को जानने का नाम सेवा है सेवा का

अभिप्रायः क्या है क्या हम मानो देखो, श्रद्धामयी ले करके मानो देखो, श्रद्धा में मानो जब सेवा करना प्रारम्भ करते हैं तो उस सेवा का फलसवरूप यह होता है कि उसका ज्ञान हो जाता है और ज्ञान के द्वारा नम्रता की प्रतिभा में परिणत हो करके अपने को महान बनाना प्रारम्भ करने लगते हैं मानो वही योगेश्वर बेटा! योगी अपने में ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ने लगता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या, यह वाक् देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी ने देखो, महर्षि रेंगणी भारद्वाज मुनि को वर्णन कराया और उन्होंने कहा हे देवतम् मानो देखो, तुम तो गम्भीर रहस्यों में मानो गमन करते हुए हो तुम्हारा यह जो सूक्ष्म सा हमने उत्तर दिया है यह आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान दोनों को एक सूत्र में लाने के लिए जब हम तत्पर होते हैं तो उसका नाम समष्टि कहलाता है, और वह व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश होना समष्टिवत बन जाना, अपने विचारों को गम्भीर न रह करके परमात्मा की महती और देखो, अनुपमता को दृष्टिपात करते हुए मानो देखो, सर्वव्यापक सर्वत्रता के ऊपर हमारा अटूट विश्वसनीय कृत न होना मानो देखो, वह तो संकीर्णता है, और उसकी कृति को हम दृष्टिपात कर लेंगे। तो प्रत्येक स्थली में तो मानो वह हमारे यहाँ व्यापकवाद है उसी का नाम समष्टि कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, समष्टि और व्यष्टि में प्रवेश कराते हुए, रेंगणी भारद्वाज और उनकी पत्नी शकुंतकेतु, ने मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों के चरणों की वन्दना की, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आप ने हमें योग में प्रवेश करा दिया है, व्यष्टि से समष्टि में पंहुचा दिया है, आप को धन्य है प्रभु! आप हमारे वास्तव में अतिथि हो। मेरे प्यारे! अतिथि की सेवा उन्होंने की, अतिथि का अभिप्रायः यह है जो अपने मौलिक आत्मिक विचारों को प्रदान करने वाला हो और वह अतिथि रूप में मानो प्रहा वह अपने में गमन कराने वाला है मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इस प्रकार दोनों ने अपनी आख्या व्रते मेरे पुत्रों! रात्रि भर उन्होंने विश्राम किया, ऋषि के आश्रम में विश्राम किया, और वह उपदेश मंजरी प्रारम्भ रही, उपदेशों में यही वाक् कि अपने मानवीयतव को ऊँचा बनाने के लिए तत्पर रहना चाहिए तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् अब समाप्त होने जा रही है आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः हमारा यह कि हमारा मौलिक जीवन में दो प्रकार की धाराएं होती हैं बाह्य जगत एक आन्तरिक जगत मानो बाह्य जगत में प्रत्येक प्राणी पशु कहलाता है, और आन्तरिक जगत में अपनी इन्द्रियों को पशु स्वीकार करके उनकी मौलिकता में प्रवेश करना है।

तो मुनिवरों! देखो, यह हमारे यहाँ प्रायः इस प्रकार का मौलिक विचार, हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है अब यह मुनिवरों! देखो, लगभग यह, ऋषिवर पांच दिवस तक ऋषि के आश्रम में मानो देखो, वास करेंगे, दोनो ऋषि का मानो पांच दिवस तक सम्पर्क बना रहेगा, इनका उनका विचार-विनिमय होता रहेगा। तो बेटा! मैं शेष चर्चाएं तो कल ही प्रगट करूंगा, आज का वाक् क्या है कि हमारा आध्यात्मिक जीवन और भौतिक जीवन दोनों प्रकार का मानो देखो, दोनो जीवनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास करें। मेरे प्यारे! देखो, विचार यह चल रहा था, क्या मानव भौतिक विज्ञान को जाने बिना, आध्यात्मिकवाद में प्रवेश नही कर सकता। कल बेटा! ये चर्चाएं होंगी, कि आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान को हम कैसे एक सूत्र में लाने का प्रयास करें, ये चर्चाएं बेटा! वेद का मन्त्र आता रहेगा, चर्चाएं करते रहेंगे आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है।

आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। बेटा! भौतिकवाद में भी अनुशासन है और आध्यात्मिकवाद में भी अनुशासन है। बिना अनुशासन के बेटा! राष्ट्र और समाज ऊँचा नही बनता और बिना अनुशासन के बेटा! योगसिद्ध आत्मा नही हुआ करती तो दोनो में देखो, यह विचारने का विषय है कि हम कैसी सभा में कैसे काल में

कैसे मानो सम्पर्क में कैसा अनुशासन हो, और हमारा आध्यात्मिक वेत्ताओं ब्रह्मवेत्ताओं के समीप जाने से कैसा अनुशासन हो वह दोनो अनुशासनों का समावेश बेटा! देखो, जब हो जाता है तो मानो देखो, प्रभु में, प्रभु में अपने को अपने में प्रभु को वह दर्शन करने लगता है, वह आत्मवान बन जाता है और प्रभु के आँगन में वह सदैव रत्त रह जाता है यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं प्रगट करूंगा, आज का मन्त्र कह रहा है प्रत्येक वेदमन्त्र बेटा! देखो, प्रभु की, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है क्योंकि माता भी पुत्र से ही माता बनती है यदि माता पुत्रवान नही है, तो मानो देखो, पुत्र उसकी गाथा गाने वाला नही है तो उसका कोई महत्व नही माना गया है। परन्तु यह कहा गया है कि वह माता का जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है जिस भी काल में विज्ञान पनपा है संसार में, उसी काल में गुरूतव परमाणु के ऊपर अनुसन्धान किया गया है, और यह पृथ्वी के गर्भ में जो खाद्य खनिज पदार्थ उसको जाने बिना वैज्ञानिक नही बना और विज्ञानवेत्ता इसको जान करके लोक-लोकान्तरों की माला बनाते हैं लोक-लोकान्तरों में भ्रमण करते हैं, परमाणुवाद को जानते हैं, तो बेटा! देखो, ये पृथ्वी अप्रतं यह वेद का मन्त्र कहता है, जैसे वेद का मन्त्र बेटा! ब्रह्म की गाथा गा रहा है, जैसे माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है जिस प्रकार ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, एक दूसरे में गाथा गाता हुआ, एक दूसरे में यह ब्रह्माण्ड लय हो रहा है, और यह परमपिता परमात्मा में समाहित हो करके कहता है, कि जिस प्रकार वेद का मन्त्र, ब्रह्म की गाथा गा रहा है, यह ब्रह्म में सब समाहित होते हैं, क्योंकि उसे हिरण्य गर्भ कहते है वह अपने में ही मानो देखो, ये संसार, इसी प्रकार ये मानव अपने को ब्रह्म में ब्रह्म को अपने में स्वीकार कर लेता है, तो आत्मवान बन करके, प्रभु को प्राप्त हो जाता है। यह है बेटा! आज का वाक् समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं करेंगी। रासना दिनांक १८-०३-१९८८

८ भौतिक आध्यात्मिक समन्वय १९ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता हैं, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा हैं क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं, मानो याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन हैं। वे परमपिता परमात्मा यज्ञमयी स्वरूप माने गएं हैं क्योंकि जितना भी यह संसार रूपी याग हो रहा है चाहे वह जड़वत में हो रहा हो, चाहे वह चेतनाबद्ध हो। मानो उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की प्रतिभा में, और उसके गर्भ में, वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं परम्परागतों से ही मानव, अपने में अनुसन्धान करता रहा है, और अनुसन्धानवेत्ताओं ने इस संसार को यज्ञशाला के रूप में बेटा! स्वीकार किया। मुझे कहीं से यह प्रेरणा आ रही है क्या मैं कुछ याग के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करूं मानो जो हमारा वेद का मन्त्र कह रहा हैं एक-एक वेद का मन्त्र इस ब्रह्माण्ड से गुथा हुआ है, एक-एक वेदमन्त्रों के गर्भ में, सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है। एक-एक वेदमन्त्रों में बेटा! आध्यात्मिकवाद और विज्ञान का, दोनों का समन्वय उसमें निहित रहता हैं। तो बेटा! मैं विशेष चर्चाएं यों तो गम्भीर मुद्रा मे तो नही ले जाना चाहता हूँ। परन्तु विचार केवल यह है कि आज का हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा हैं, यज्ञं भवितं ब्रह्वा सम्भव व्रत्यं मानो यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला हैं, जिस यज्ञशाला में, प्रत्येक प्राणी, अपने में याग कर रहा है। वह परमपिता परमात्मा जो ब्रह्मामयी स्वरूप माने गएं हैं, वह पुरोहित है, वह सखा हैं वह आनन्दवत हैं। आज हम उस परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते हुए और जो उसके

ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा, मानो इस ब्रह्माण्ड में रत्त हो रही हैं, उस आभा में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ।

अग्नि सूक्त

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, ऋषि-मुनियों का काल बड़ा विचित्र रहा हैं उन्होंने बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी है इस सम्बन्ध में तो आओ, मानो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें एक काल की चर्चा प्रगट करने आया हूँ, वह वार्त्ताएं मैंने कई कालों में भी तुम्हें प्रगट की हैं, आज भी मुझे स्मरण आ रही हैं, वेद के मन्त्रों का आधार पर आज के हमारे वैदिक पठन-पाठन में अग्नि सूक्तों का वर्णन किया जा रहा था, क्योंकि अग्नि अपने में बड़ी विचित्र है, और वह तेजोमयी है जैसे माला मे सूत्र होता है, और वह मनके पिरोएं जाते हैं, तो वह माला बन जाती हैं, इसी प्रकार अग्नि तेजोमयी बन करके बेटा! एक सूत्र की भांति, हमें सदैव दृष्टिपात आती रहती हैं, और हम उसके ऊपर विचारते रहते हैं, अग्नि मानो देखो, कहीं गार्हपथ्य अग्नि बन करके रहती हैं, कहीं वैश्वानर नाम की अग्नि बन करके रहती हैं कहीं मानो आह्वनीय नाम की अग्नि बन करके रहती हैं कहीं गृहपथ्य नाम की अग्नि का चयन किया गया हैं, कहीं मानो देखो, हृदयग्राणी अग्नि का वर्णन हैं, कहीं मानो देखो, वृत्तिका अग्नि का वर्णन हैं, कहीं आदित्य भानकेतु अग्नि का वर्णन आता रहता हैं, तो बेटा! देखो, अग्नियों की बहुत पर्यायवाची रूपों में, उसका वर्णन किया गया हैं एक अग्नि बेटा! काष्ठ में रहने वाली हैं, एक अग्नि मानो देखो, आपोमयी ज्योति में गति करने वाली भी अग्नि कहलाती हैं, बेटा! अग्नि के बहुत स्वरूप माने गएं हैं। आज मैं अग्नि, एक अग्नि वह देखो, जो पाण्डितव मानो देखो, जो पाण्डितव के कण्ठ में निहित रहती हैं, वह अग्नि उससे ऊर्ध्वा अग्नि वह जो ऋषि-मुनियों के मस्तिष्को में और कण्ठ में सजातीय हो जाती हैं, उसको ब्रह्माग्नि कहते हैं।

महर्षि अर्धभाग और हाथीवान

तो मेरे पुत्रों! यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नियों का प्रायः चयन हो रहा है परन्तु आज मैं तुम्हें अग्नि की विवेचना मे नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह प्रगट करने के लिए आया हूँ बेटा! कि ब्रह्मणां ब्रहे यागां रूद्र भागा मेरे पुत्रों! प्रत्येक मानव संसार में याग कर रहा हैं, प्रत्येक वनस्पतियां याग हो रहा हैं, नाना देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, भौतिक विज्ञानवेत्ता सर्वत्र सिमट करके बेटा! याग कर रहे हैं। आओ, बेटा! मैं याग के सम्बन्ध में एक तुम्हें ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ न्यों तो ऋषियों की चर्चा बहुत कुछ होती रहती हैं, जैसे बेटा! देखो, रेंगणी भारद्वाज मुनि की चर्चा हो रही थी, और श्वेताश्वेतर भारद्वाज की भी समय-समय पर चर्चाएं होती रहती हैं, परन्तु देखो, उद्दालक गोत्र में, शिकामकेतु उद्दालक गोत्र में जन्म लेने वाले ऋषियों की चर्चा भी प्रायः होती रही हैं। परन्तु देखो, आज मैं तुम्हें बेटा! देखो, अंगिरस गोत्र में जन्म लेने वाले, मेरे पुत्रों! मैं अर्द्धभाग के आसन पर ले जाना चाहता हूँ। जहाँ बेटा! देखो, महर्षि अर्द्धभाग अपने में बड़े मानो अध्वर्यु उद्गाता के रूप में अपने जीवन को मानो व्यतीत करते रहते थे, वह उद्गाता कहलाते थे वह अध्वर्यु उदगम ब्रह्मे उदगम समानं ब्रहे आत्मा क्योंकि आत्मा से वह उद्गीत गाते रहते थे तो बेटा! एक समय ऐसा अकाल पड़ा, क्या पण अकाल आ गया। ऐसा भंयकर पण अकाल आया कि मुनिवरों! देखो, सर्वत्र सम्पदा प्रजा की समाप्त हो गई। मेरे प्यारे! देखो, जब कई समय हो गये, अन्न प्राप्त नही हुआ, तो उनकी पत्नी श्वेति मानो देखो, वह अन्न से पीड़ित हो गई, और जब अन्न से पीड़ित हो गई, तो उसने अपने देव से ऋषि से कहा-प्रभु! मेरा प्राणान्त होने वाला हैं, हे प्रभु! मेरी रक्षा करो। क्योंकि पत्प प्रमाणां ब्रहे हमारे आचार्यों जनों का कथन और वेद का मन्त्र कहता है कि पति का अभिप्रायः है कि वह रक्षक होता हैं, क्योंकि परमपिता परमात्मा को भी पतितव कहा जाता हैं वह हमारी रक्षा करने वाला हैं। मेरे प्यारे! पति का अभिप्रायः यह कि वह मानव के जीवन की रक्षा करने वाला हो, श्वास पर श्वासों की गतियों पर मानो देखो, एक गतियां प्रदान करने वाला हो। उसका नाम रक्षक और पति कहा जाता है। महात्मा

अर्द्धभाग ने कहा-देवी! मैं गमन करता हूँ, और कहीं तुम्हारे प्राणों की रक्षा के लिए अन्न को मुझे लाना है। तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि अर्द्धभाग ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते बेटा! देखो, एक नगर के तट पर मानो देखो, एक जलाशय के तट पर मुनिवरों! एक हाथीवान विद्यमान था और वह हाथीवान माष को पान कर रहा है मानो देखो, वह उड़दों को पान कर रहा था और महर्षि अर्द्धभाग ने भिक्षामयी देहि के शब्द का उद्गीत गाया, उन्होंने बेटा! देखो, अपने में से अपने करों से उड़दों में से बेटा! भिक्षा प्रदान की। मेरे पुत्रों! जब प्रदान कर दी, तो उस समय कहा कि-प्रभु! मैं आपके लिए जल भी प्राप्त कराऊं? तो मेरे प्यारे! महात्मा अर्द्धभाग ने यह कहा कि तुम हाथीवान शुद्र हो। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने शुद्र कहा, तो आश्चर्य हुआ, हाथीवान ने कहा-प्रभु! मेरे झूठें उड़दों में तो यह मानो यह अकृतं मैं शूद्र हूँ नही और आपो लाने से जल को लाने से मैं कैसे शूद्र बन जाऊंगा?

दूसरों के आश्रित बनाना शूद्र

तो मेरे प्यारे! महात्मा अर्द्धभाग ने कहा हे व्रते! मैं मानो इसीलिए शूद्र कह रहा हूँ क्या जिस क्रियाकलाप को मैं स्वतः कर सकता हूँ और वह मुझे अपने आश्रित बनाना चाहता है वह जो आश्रित बनाना चाहता है, वह शूद्र संज्ञा में प्रदान किया जाता हैं। मानो वह शूद्र कहा जाता हैं। तो तुम मुझे अपने आश्रित बनाना चाहते हो, क्योंकि अन्न का अभाव हैं, मुझे अपनी पत्नी के प्राणों की रक्षा करनी हैं, वह मेरी रक्षक रही हैं। देखो, मेरे जीवन में, मुझे उसके प्राणों की रक्षा करनी हैं। और मैं उसे अन्न प्रदान कर सकूंगा, जल बहुतायात में हैं, इसीलिए मैं तुम्हारा आश्रित बनना नही चाहता। तो मेरे प्यारे! ऋषि बड़ी विचारों की उड़ान उड़ते रहते थे, ऋषि ने अपने विचारों में कहा क्या जो मानो दूसरों का आश्रित बनता हैं दूसरों का आश्रित बनाना चाहता हैं वह मानो शूद्र संज्ञा में मानो प्रदान किया गया हैं तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा अर्द्धभाग यह उत्तर दे करके, और हाथीवान की सन्तुष्टि हो गई, और हाथीवान से भिक्षा ले करके, उन्होंने वहाँ से गमन किया, वह अपने आश्रम में पंहुचे और पत्नी को जा करके वह मा प्रदान करने लगे, लो देवी इससे तुम्हारे प्राणों की रक्षा होगी। और मुझे महाराज अश्वपति के यहाँ से निमन्त्रण आ रहा है, उसके यहाँ एक याग हो रहा है।

उद्गाता

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने अपनी देवी को प्रदान करके, और वहां से उन्होंने प्रदान किया धन्यं ब्रह्मे कृतं लोकां मानो वेदमन्त्रों का आश्रय उद्गीत गा करके उन्हें अन्न को प्रदान किया और वहाँ से कहा-देवी! अब मैं महाराज अश्वपति के याग में, मेरा प्रवेश होना, मुझे उद्गाता बनना है। उन्होंने कहा बहुत प्रिय भगवन! मेरे प्राणों की रक्षा हो गई हैं, मेरे प्यारे! महात्मा अर्द्धभाग ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करके महाराज अश्वपति के राष्ट्र के यहाँ पंहुचे जहाँ यज्ञशाला का निर्माण हो गया था, साकल्य एकत्रित हो गया था उद्गाता अध्वर्यु मानो देखो, यज्ञमान ब्रह्मा होतागण विद्यमान हैं, एक केवल उद्गाता का आसन, केवल देखो, शून्य है, तो मुनिवरों! देखो, महात्मा अर्द्धभाग ने देखो, उद्गाता के आसन को ग्रहण कर लिया। मेरे प्यारे! देखो, याग में चार स्थली होती हैं, जो याग को सम्पन्न करने वाले होते हैं। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मतव, और उद्गातातव और अध्वर्यु तव और मुनिवरों! देखो, यज्ञमान श्वसतं मुनिवरों! देखो, चार यह स्थली होती हैं, पंचम स्थली पुराहित की होती हैं, और छठा जो स्थान होता है वह होतागणों का होता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, अपने में देखो, यज्ञशाला में ऋषि विद्यमान हो गये, अब ऋषि जब विद्यमान हो गये, तो राजा ने कहा यह तो उद्गाता का आसन हैं, अब उद्गाता उसे कहते हैं, जो उद्गीत गाता हैं, जो उद्गीत गाने वाला है, वही तो उद्गाता हैं। तो मेरे प्यारे! राजा ने कहा हे प्रभु! आप ने जिस आसन को ग्रहण किया हैं, इस आसन का तुम्हें ज्ञान है, यह कौन-सा आसन है? महात्मा अर्द्धभाग बोले कि-प्रभु! हमारे पूर्वजों ने हमारे आचार्यों ने वर्णन किया है कि यह उद्गाता का आसन हैं, यह उद्गीत गाने वाले का आसन हैं, उन्होंने कहा उद्गीत

कौन गाता हैं? उन्होंने कहा उद्गीत वह गाता हैं, जो मानो देखो, ज्ञान से परिपक्क हो और जो आत्म ज्ञान में रत्त रहने वाला हो, और वह वेदों से उद्गीत गाने में याग को सम्पन्न करता हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा यथार्थ राजा ने पुनः प्रश्न किया कि हे ऋषिवर! क्या यह तुम जिस आसन पर विद्यमान हो यह आसन किसका हैं? उन्होंने कहा यह आसन उसका है, जो जटा पाठ में वेद का गान गाने वाला हो, वेद का जि उद्गीत गाता है। और अपनी आत्मा से समन्वय करता हुआ, वेद की ध्वनि को, और परमपिता परमात्मा का ज्ञान स्वीकार करता हुआ, वह द्यौ से अपनी वाणी का जो समन्वय करने वाला हो, उसे उद्गाता कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने पुनः जब यह उत्तर दिया, तो राजा ने कहा-प्रभु! यथार्थ हैं, परन्तु मैं पुनः यह प्रश्न कर रहा हूँ ऋषिवर! क्या तुम जिस आसन पर तुम विद्यमान हो यह आसनवेत्ता कौन है? आसनवेत्ता मानो देखो, वही उद्गाता हैं।

वह उद्गाता किसे कहते हैं? वह उद्गाता उसे कहते हैं जो अपनी प्रवृत्ति को, अपने चक्षुओं के ज्ञान को जो सूर्य से समन्वय कर लेता है और सूर्य की ज्योति और नेंत्रों की ज्योति का जो समन्वय करना जानता हैं, मानो देखो, वह व्यष्टि में, समष्टि में प्रवेश हो जाता हैं तो मानो वह उद्गाता कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, राजा शान्त हो गया, राजा ने पुनः कहा कि भगवन! उद्गाता किसे कहते हैं? उन्होंने कहा उद्गाता उसे कहते हैं, जो उद्गीत गाना जानता हैं, उस उद्गाता के प्रत्येक शब्द का समन्वय अन्तरिक्ष से होता हैं, और अन्तरिक्ष का समन्वय मानो देखो, शब्द दिशाओं से ओत-प्रोत होता हैं। दिशाओं में गमन करते हुए मानो देखो, उनका स्वरूप बनता हैं, वह उद्गाता है, जो दिशाओं को जान करके और प्रत्येक दिशा का मन्त्र उद्गीत गाने वाला देवताओं का स्वामी माना जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह भी ऋषि ने जब उत्तर दिया तो पुनः राजा ने कहा-प्रभु! उद्गाता मानो कौन हैं? उन्होंने कहा उद्गाता वह जो अपनी वाणी को अन्तरात्मा ज्ञान और प्रयत्न के साथ समन्वय करता हुआ, चित्त के मण्डल में अपने को प्रवेश करा देता हैं, और चित्त के मण्डल में जो शब्दों की ध्वनियां एक माला बनी हुई है, और जो उद्गाताओं के पूर्व जो उद्गाता हो गएं है, उनसे देखो, अपनी वाणी का जो समन्वय करना जानता हैं, वह उद्गाता कहलाता हैं। मेरे प्यारे! ऋषि ने जब यह उत्तर दिया तो राजा जो ऋषि के चरणों में ओत-प्रोत हो गये। और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु आपने मेरी शंकाओं का निवारण किया हैं। राजा तो अपनी स्थली पर मौन हो गएं परन्तु देखो, इतने में दिव्या से जो राजलक्ष्मी थी, वह उपस्थित हुई और उन्होंने कहा हे उद्गीत गाने वाले! राजा तो मौन हो गया हैं, परन्तु मैं भी तो कुछ प्रश्न करना चाहती हूँ। मेरे पुत्रों! ऋषि ने कहा बोलो दिव्या से जो तुम्हारी इच्छा है, वह तुम प्रश्न करो, उन्होंने कहा कि हे दिव्य ब्रह्मा! हे ब्रह्म को जानने वाले ऋषिवर मैं यह जानना चाहती हूँ, कि उद्गाता किसे कहते हैं? जब उन्होंने भी यही प्रश्न किया, तो ऋषि कहता है कि उद्गाता उसे कहते हैं, जो अपनी प्रवृत्तियों को सूर्य की रश्मियों से मिलान करता हुआ, और अपने आत्म तत्त्व से जो मानो देखो, याग से उसका समन्वय हो जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि के वाक्यों और प्रश्न और उत्तरों की आभा में देवी मौन हो करके बोली कि धन्य है प्रभु! परन्तु मैं यह जानन चाहती हूँ, उद्गाता तुम उद्गीत गाते हो, तुम किसका उद्गीत गाते हो? उन्होंने कहा कि मैं जब यज्ञशाला में विद्यमान होता हूँ, तो प्रत्येक देवता जो हमारे अंग-संग विद्यमान रहते है, उसी देवताओं के सम्बन्धी वेदमन्त्र होता हैं, और उसका उद्गीत गा करके मैं उसका आह्वान करता हूँ, और साकल्य के द्वारा अपने शब्दों को अग्नि की धाराओं पर और अग्नि का समष्टि रूप बना करके मैं उसे द्यौ लोक में पंहुचाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा धन्य है भगवन! अप्रतम ब्रह्मे मानो देवी ने पुनः यह प्रश्न किया हे प्रभु! यह जो हमारा स्थल यह जो याग है, यह राष्ट्रीय प्रणाली का नही यह आध्यात्मिकवेत्ता ही यहाँ उद्गीत गाते रहे हैं, क्या तुम उस आध्यात्मिकवाद को जानते हो? ऋषिवर जो उद्गीत गाते रहे हैं, उन्होंने कहा कि हाँ देवी! मैं कुछ-कुछ जानता हूँ, उन्होंने कहा तो उत्तर दो। ऋषि कहता है, महात्मा अर्द्धभाग ने कहा क्या मैं उसको जानता हूँ, क्या जो उद्गीत गाने वाला हैं, मानो देखो, वह

उद्गाता कहलाता हैं, जो मानं ब्रह्मे आत्मा जो आत्मा को जानने वाला, आत्मा का समन्वय मानो देखो, उन देवताओं से होता है, जिन देवताओं से जो देवता हमारे क्रियाकलापों में जड़वत है, जैसे पंच महाभूत है, और पंच महाभूतों से मानो देखो, आत्मा का लोक ही पंच महाभूत कहलाया गया है, यह जो पंच महाभूत हैं, यही तो आत्मा का लोक हैं। लोक कहते हैं, गृह को सदन को मानो यही उसका लोक कहलाया गया हैं, पंच महाभूतों का आत्मा का लोक हैं, वह आत्मा उसमें वास करता हैं, और जितना यह याग होता है, उसमें पंच महाभूतों का शोधन किया जाता हैं। जब पंच महाभूत शोधन हो जाते हैं, वायुमण्डल पवित्र बन जाता हैं, आत्मा का लोक यह शरीर है, जिसमें पंच महाभूत क्रियाकलाप कर रहे है, मानो देखो, आत्मा इस लोक में स्वच्छ हो करके और वह मोक्ष मी पगडण्डी को प्राप्त करना चाहता हैं।

याग से वायुमण्डल की पवित्रता

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने जब यह उत्तर दिया, तो ऋषि ने कहा धन्य हैं प्रभु! मेरे प्यारे! पुनः यह प्रश्न किया और देवी ने कहा महाराज! उद्गाता कौन होता हैं? उन्होंने कहा तुम उस उद्गाता को जानते हो ऋषिवर जिस उद्गाता से आत्मा का उत्थान होता हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है ब्रह्मणां ब्रहे कृतं अग्नं रूद्रो भागा प्रह्वा वर्णनं ब्रहे कृतं लोकाः वेद का ऋषि कहता हैं, दिव्या से मानो मैं उस आत्मा के तत्वों को जानता रहता हूँ, मानो मैं अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा, मैंने बहुत अध्ययन किया हैं, और उसको क्रिया में भी लाने का मैंने प्रयास किया हैं। परन्तु देखो, जिस आत्मा को तुम जानना चाहते हो उद्गाता हैं, जो आत्मा को परमात्मा के हृदय से और आत्मा के हृदय का जब समन्वय हो जाता हैं। तो हृदय एक दूसरे का हृदय अगम्य होते हुए मानो देखो, हृदय गम्य हो करके वह शून्य बिन्दु की प्रतिभा कहलाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा-देवी! अमृतं देवी ने कहा धन्य है, प्रभु हे भगवन! आईए आप उद्गाता के आसन को ग्रहण कीजिए मेरे प्यारे! देखो, उद्गाता के आसन को उन्होंने ग्रहण किया। याग प्रारम्भ होने लगा मेरे पुत्रों! देखो, यागां भवितं ब्रह्मा लोकां देवी! ने कहा-प्रभु! सूर्य उदय हो रहा हैं। क्या याग का समन्वय मानो सूर्य से क्या होता हैं? उन्होंने कहा-देवी! जितनी भी ये सुगन्धि है, साकल्य है, यह सब मानो सूर्य की रश्मियां अपने गर्भ में ले जाती है, और उसको द्यौ में समन्वय हो करके और उसको मानो वह बिखेर देता हैं। उससे वायुमण्डल पवित्र हो जाता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब यह उत्तर दिया, तो याग का प्रारम्भ होने लगा, याग में अपने में ध्वनियां होने लगी, मेरे पुत्रों! जैसे ही याग प्रारम्भ हो रहा था, कहीं से भ्रमण करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि लोमश और कागभुषुण्ड जी कहीं से भ्रमण करते हुए चले आये, मानो यह तो मुझे स्मरण हैं बेटा! महर्षि कागभुषुण्ड जी का बड़ा नामोकरण रहा हैं। उनके अध्ययन करने का मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराया, क्या उन्होंने मृत्यु को विजय करने के लिए बारह-बारह वर्ष के बारह ही अनुष्ठान किये। मानो देखो, जिसमें वह एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके याग करते थे। आध्यात्मिक और भौतिक याग का दोनों का समन्वय होता रहा है, क्योंकि जब दोनों का समन्वय हो जाता हैं, तो आध्यात्मिक अपने में एक महानता की ज्योति में रत्त होता हैं, तो बेटा! आज का विचार क्या है, कि याग के सम्बन्ध में मेरे पुत्रों! विचार देने के लिए तो नही आया केवल संक्षिप्त परिचय देने के लिए आया हूँ। यह परिचय दिया है।

याग की दक्षिणा

तो मेरे पुत्रों! देखो, याग जब देखो, कई समय के पश्चात, याग सम्पन्न हुआ तो सम्पन्नता पर उन्होंने दक्षिणा प्रदान की, मेरे पुत्रों! दक्षिणा के सम्बन्ध में मैंने कई स्वरूपों का वर्णन किया हैं, हमारे दार्शनिक रूपों में वेद की प्रतिभा में वेद की भाषा में, दक्षिणा वह द्रव्य नही कहलाता हैं। द्रव्य का नाम दक्षिणा नही कहलाता हैं वह दक्षिणां

ब्रह्मे देखो, यागां ब्रह्मे मेरे पुत्रों देखो, यज्ञमान से पुरोहित कहता हैं, क्या उद्गाता भी कहता है, मुझे दक्षिणा प्रदान करो मेरे प्यारे! वह दक्षिणा देना चाहता हैं, और आचार्य दक्षिणा को समर्पित अपने में करना चाहता हैं। मेरे प्यारे! देखो, दक्षिणा का अभिप्रायः क्या जो यज्ञमान में त्रुटियां होती हैं, देखो, आत्मा के उत्थान के लिए देखो, जो आगे को गमन नही होने देते जो वह दोष है। वह मानो देखो, जो भिन्न-भिन्न प्रकार की जो त्रुटियां हैं, अरे उन्हे यज्ञमान को साकल्य में प्रदान कर देना वह दक्षिणा कहलाती हैं।

मेरे प्यारे! देखो, दक्षिणा के स्वरूप में पाण्डितव बेटा! इसके ऊपर सदैव अनुसन्धान करते रहे हैं, विचारते रहे हैं आचार्य जनों को दक्षिणा यज्ञमान प्रदान करता हैं, द्रव्य तो उसकी उदर पूर्ति के लिए हैं, परन्तु दक्षिण का अभिप्रायः यह है, कि जो त्रुटियां हैं, जो मानो देखो, उसके द्वारा दुर्गण हैं, क्रोधाग्नि जागरूक हैं, या मानो देखो, कामाग्नि जागरूक हैं, इन त्रुटियों में जितने भी दोषारोपण हैं, उन्हें मानो पुराहित को प्रदान करना दक्षिणा के रूप में वह संकल्प कहलाता हैं। वह दक्षिणा नही कहलाती हैं। उसका समन्वय बेटा! हृदय से होता हैं, हृदय का समन्वय श्रद्धा से होता हैं, श्रद्धा का समन्वय पुनः बेटा! हृदय अगम्य हो जाता हैं। तो हृदय मे तो श्रद्धा अपने स्थान को लिए हुए हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, यह उन्होंने प्रदान की और प्रदान करते हुए, ब्रह्मणां ब्रहे कृतं मेरे प्यारे! देखो, याग सम्पन्न हो गया। उन्होंने उन्हें द्रव्य प्रदान किया, अपने गृह को जब जाने लगे गमन करने लगे, तो महात्मा अर्द्धभाग इत्यादियों को उन्होंने द्रव्य और मुद्रांए प्रदान की। मेरे पुत्रों! देखो, पुनः उन्होंने अपने गृहों में अपने दिव्या की रक्षा की, उनके द्वारा रक्षा हो गई, उस द्रव्य के द्वारा उस द्रव्य की पूर्ति हो गई। तो उसके जीवन का निर्वाह मानो देखो, आत्म तत्त्व जो आत्मा का लोक हैं, वह सदैव पवित्रता में गमन करता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् उच्चारण करके ऋषि ने उद्गीत गाते हुए यह अप्रतं यह अब आज का विचार अब बेटा! यह समाप्त होने जा रहा हैं अब मेरे प्यारे! महान्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् यशा शन्नं रथं माहं वाचन गताः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ऐसी विचित्र उड़ाने उड़ रहे थें, जिसमें आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों का कितना समन्वय रहता हैं बहुत समय हुआ, मेरे पूज्यपाद अपने उद्गीत गाते रहते हैं आधुनिक जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही हैं, वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ मेरा अन्तरात्मा तो पूज्यपाद गुरुदेव जानते ही हैं, मेरा अन्तरात्मा तो यज्ञमान के साथ रहता हैं, और मैं सदैव यह कहता रहता हूँ, क्या यह जो काल चल रहा हैं। यह एक वाममार्ग का काल हैं। वाममार्ग उसे कहते हैं, जहाँ राजा से ले करके और प्रजा तक सब देखो, एक अशुद्ध मार्ग को ग्रहण करने के लिए तत्पर हैं। तो वह देखो, जो मार्ग से उल्ट मार्ग होता है, उसी को वह प्रायः वाममार्ग कहा जाता हैं, यह वाममार्ग की प्रवृत्ति महाभारत के काल के पश्चात यह आती रही, और यागों का तिरस्कार किया, समाज ने, यागों में मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया, जबकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का जो आध्यात्मिक और भौतिक याग का, दोनो का समन्वय याग में यदि हिंसा हो गई, तो वह याग नही रहा, परन्तु देखो, यहाँ मध्य काल में अश्वमेध याग के अर्थ को न जान करके बुद्धि जीवि प्राणी अपने को स्वीकार कर लिया और अर्थों के अनर्थ किए हो, मांसो की आहुति देना, यागों में प्रारम्भ हो गया, उसका परिणाम यह हो रहा हैं, क्या याग तो रहा नही, परन्तु देखो, जितना जन समूह है, राजा से ले करके प्रजा, अपना जीवन उसी आधार पर निर्धारित करना निवृत करना चाहता है, जिससे उसकी मानो देखो, मांस प्रवृत्ति बनती चली जा रही है, तो इसको मानो देखो, हम भक्ष्य-अभक्ष्य देखो, जब विचार नही रहता, तो इसको उस काल को वाममार्ग कहते हैं वाममार्ग की प्रतिभा में यहाँ नाना प्रकार के मत-मतान्तरों की प्रतिभा आई, नाना रूढ़ियाँ बनी ईश्वर के नामों पर, और वह नाना रूढ़ि मानो देखो, प्रभु का, उन्होंने तिरस्कार किया, वेद का अध्ययन नही किया वेद के विचारक मानो न रहे करके ही उसका

परिणाम यह हुआ समाज अन्धकार में चला गया। मेरी पुत्रियों का तिरस्कार किया गया, नाना देखो, सम्प्रदायों ने, समाज को ऐसे अकृत पर पंहुचा दिया हैं, कि जहाँ अग्नि काण्ड होने लगा, अग्नि ही दृष्टिपात होने लगी, अभी-अभी मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया, कि आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद हैं, उसमें अग्नि प्रदीप्त हो रही है और अग्नि प्रदीप्त क्या एक प्राणी प्राणी को नष्ट कर रहा हैं परन्तु राष्ट्र यह चाहता है, कि तेरी लोलुपता बनी रहे, तेरा आसन बना रहे, प्राणी नष्ट हो जाएं, तो होने दीजिए, परन्तु जब यह प्रवृत्ति राष्ट्रवाद में आ जाती हैं, तो वह राष्ट्र को हम अन्धकार का काल कहते हैं, उसे वाम मार्गवाद कहते हैं।

राष्ट्र की अवधारणा

तो आज का विचार क्या मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय कराने के लिए आया हूँ क्या पूज्यपाद! आधुनिक जो जगत चल रहा है यह बड़ा विचित्र है आप तो आत्मा की, देवताओं की चर्चा और याग की कितनी ऊँची उड़ाने उड़ते रहते हैं, उनका समाज मे अर्थों का अनर्थ करके वहीं का वही समाज चला गया। परन्तु आज मैं विशेष, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराया था कि समय-समय पर जब इस प्रकार की प्रवृत्ति समाज में बनती हैं, तो यह रूढ़िवाद समाप्त होना चाहिए। राजा अपने राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना चाहता हैं। तो यह रूढ़िवाद समाप्त होना चाहिए, जिससे देखो, धर्म और मानवीय दर्शन की रक्षा होनी चाहिए। आज धर्म और मानवता की रक्षा नही हो रही हैं, नाना प्रकार के जो रूढ़िवाद है, ईश्वर के नामों पर, उनमें अज्ञान आ गया है, और वह अज्ञान से रूढ़ि बन करके, राजा भी नाना धर्म कहता हैं। मैंने पुनः काल में पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया, क्या प्रभु यह नाना धर्म होते है? या धर्म एक होता हैं तो पूज्यपाद ने वर्णन कराया, कि धर्म तो एकोकी वचन हैं, देखो, उसमें एकोकीवचन में ही धर्म और धर्म प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित रहता हैं। और वह धर्म को यदि राजा त्यागता है, तो उससे दुर्भागी कोई राष्ट्र नही हो सकता। मानो देखो, यदि वह त्याग दिया तो रह क्या गया राष्ट्र किसे कहते हैं, विचार आता रहता है, मैं राष्ट्र के सम्बन्ध में विशेष चर्चा तो नहीं केवल यह कि राष्ट्र में राष्ट्र होता ही हैं। धर्म की रक्षा के लिए यदि राष्ट्र अपने से धर्म को दूरी कर देता हैं, तो राष्ट्र रह गया क्या किसी अग्नि का नाम राष्ट्र नही कहलाता। राष्ट्र किसी पृथ्वी का नाम देखो, राष्ट्र नही कहलाता राष्ट्र कहते हैं, तो कर्तव्यवाद में निहित रहता हैं, और कर्तव्य का पालन करता हैं, और मानव समाज को कर्तव्य में बाध्य कर देता हैं लाने के लिए। इसीलिए देखो, राष्ट्र का निर्माण होता हैं, मैंने इससे पूर्व काल में पूज्यपाद गुरुदेव कल भगवान मनु की चर्चा कर रहे थे, भगवान मनु के यहाँ मानो मछली से ले करके गऊओं तक की प्राणी मात्र की रक्षा होती हैं, जहाँ राष्ट्र में यह प्रवृत्ति रक्षा करने की हो वही तो राष्ट्र कर्तव्यवाद में ले जाता हैं। जब यहाँ सुरा और सुन्दरी में मानो राष्ट्र लग जाता हैं, तो राष्ट्र की प्रणाली भ्रष्ट हो जाती हैं। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन करते हुए कहा क्या हे भगवन! जहाँ यह हमारी वाणी जा रही है, वहाँ याग का सम्पन्न हुआ और मैं सदैव देखो, उस यज्ञमान को यह कहता रहता हूँ, कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहें। जिससे तेरे गृह में सुदपयोग द्रव्य का होता रहे। द्रव्य के दुरूपयोग का नाम वाममार्ग है, द्रव्य के सदुपयोग का नाम ही देखो, वह सत्य मार्ग कहलाता हैं।

शासक की दृष्टि

तो इसीलिए आज मैं राष्ट्रवाद की चर्चा न करता हुआ, मैंने बहुत पुरातन काल में वर्णन किया था कि यदि राजा राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता हैं, तो बना सकता हैं, यदि राजा के हृदय में यह कि मेरी राष्ट्रीय प्रणाली मेरी पद्धति बनी रहें। यह समाज मृत्यु में चला जाएं, अन्धकार में चला जाएं, जब ऐसी मनोप्रवृत्तियां मनो भावना राष्ट्र की बन जाती हैं, तो राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति आ ही जाती हैं, मानो देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद

ज्ञान कर्म और उपासना

गुरुदेव से वर्णन किया कि राष्ट्र अपने राष्ट्र को कैसे ऊँचा बना सकता हैं, क्या भिन्न-भिन्न प्रकार की रूढ़ियों को जो राज नष्ट कर देता हैं, और धर्म और मानवता की रक्षा करता है। जहाँ मानव का एक वृत बन जाता हैं, और मानव धर्म और मानव दर्शन को मानो धर्म में पिरो देता है, धर्म और मानव दर्शन और विज्ञान की उसमें पुट लग जाती हैं, और वेदों प्रकाशां जो प्रकाश में रत्त होता है वही समाज ऊँचा बना करता हैं, और वह राष्ट्र ऊँचा बन जाता हैं, मैंने कई काल में वर्णन करते हुए यह कहा था, पूज्यपाद गुरुदेव के मानो विचारों को व्यक्त करते हुए क्या समाज में प्रत्येक रूढ़ि के आचार्यों का शास्त्रार्थ होना चाहिए। विचार-विनिमय होना चाहिए। राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। जिससे वह देखो, सत्य और असत्य का निर्णय कर सके और वह देखो, जो धारा जो धर्म को विचार देखो, मानव दर्शन पर विज्ञान पर कर्तव्यवाद पर स्थिर हो जाएं, उसको मानो राजा को स्वीकार कर लेना चाहिएं। ऐसा मानो वैदिक साहित्य वेद का मन्त्र वैदिक ऋषियों का यह मन्तव्य रहा हैं।

राजा रावण के काल में भी जिस समय रूढ़िवाद पनपा उस काल से पूर्व काल में भी रूढ़िवाद पनपा, परन्तु रूढ़िवाद का अक्षय नष्ट किया गया, और वैदिक और मानवीयता का प्रसार हुआ, जब तक यह नही हो सकता जब तक मानव अपने राष्ट्र में शान्ति की स्थापना नही कर सकता, अश्वमेध याग करने वाला राजा हो अजामेध करने वाला राजा हो। अग्निष्टोम करने वाला राजा हो। देखो, यहाँ वाजपेयी याग करने वाला राजा हो। वहीं भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे प्रायः वैदिक साहित्य में होता रहा हैं। तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। आज्ञा पाने से पूर्व की हे यज्ञमान! मेरी अन्तरात्मा मानो देखो, सदैव क्या तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग बना रहे। यागां ब्रह्मे देखो, व्यापक क्रियाकलापों में द्रव्य लगा रहे और तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहें ऐसी मेरी सदैव कामना रहती हैं आज के हम इन विचारों को हम अपना विराम दे रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने दो शब्द उच्चारण किये, और इन शब्दों में कितनी मार्मिकता और वैदिकता और आत्मीय शब्द उसमें राष्ट्र को ऊँचा बनना हैं, तो उनकी जो मनोभावना है, उनके हृदय में एक दाह हैं, राष्ट्र के प्रति जो एक उल्लास हैं, और वह उसमें मानो किसी काल में दुखित भी होते हैं। तो यह इच्छाएं मानो देखो, ब्रह्म ब्रणा सब प्राणी अपने में सत्य क्रयाकलापों में रत्त हो करके पूर्ण रूपेण करने चाहिएं। यह आज का वाक्, अब समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् ब्रह्म गणां रथं आभ्यां रूद्रा वसु आ पा ओ३म् ब्रह्म गायन्त्वा आभ्यां ऋषि वाया मां गताः ओ३म् यश्शचाम रथप्रा वसु आप्यां रथाः अच्छा भगवन्! आज्ञा।